॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥

वर्ष ४

भक्ति

संख्या १२

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

वार्षिक चन्दा २)

सम्पादक—
म० कृष्णानन्द, भूमानन्द

एक प्रति ।)

भाद्रपद सम्वत् १९८७

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली सचित्र मासिक पत्रिका।

वर्ष ४ | श्री भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी, भाद्रपद पूर्णिमा सं० १९८७ | अङ्क १२

वेदोपदेश

अतो देवा अवंतु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे। पृथिव्याः सप्तधामभिः॥ १॥

गायत्र्यादि छन्दों द्वारा परमेश्वर ने इस भू प्रदेश को आक्रमण किया, इस कारण देवता हमारी इस भू प्रदेश के पापों से रक्षा करें॥ १॥

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्यपांसुरे॥ २॥

विष्णु भगवान् ने इस प्रतीयमान जगत को जब आक्रमण किया, उस समय तीन प्रकार से अपने चरणों को स्थापित किया, इन्हीं विष्णु भगवान् के धूल युक्त चरणों में यह सब जगत अन्तर्गत है॥ २॥

त्रिणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । अतोधर्माणिधारयन् ॥ ३ ॥

किसी से भी हिंसा किये जाने के अशक्य सब जगत के रक्षा करने वाले विष्णु भगवान् इन पृथिवी आदि स्थानों में अग्नि होत्रादि धर्मों को धारण करते हुये तीनों पदों से व्याप्त हुए ॥ ३ ॥

विष्णोः कर्माणि पश्यत यतोव्रतानिपरपशे । इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ ४ ॥

जिस विष्णु भगवान् के अनुग्रह से सब यजमान अग्नि होत्रादि कर्मोंका अनुष्ठान करते हैं, उन विष्णु भगवान् कर्मों को देखो, वह विष्णु इन्द्र के योग्य सखा है ॥ ४ ॥

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीवचक्षुराततम् ॥ ५ ॥

विद्वान् विष्णु भगवान् के उत्कृष्ट स्थान को शास्त्र दृष्टिसे ऐसे देखते हैं जैसे आकाश को चक्षु ॥५

भगवद्भक्ति

[ले० पूज्य श्री स्वामी भोले बाबा जी]

कथा अल्ह जी की

अल्ह जी परम भगवद्भक्त थे। तीर्थयात्रा में कहीं एक राजा के बाग में उतरे, सेवा पूजा की, भगवत् के भोग लगाने को माली से आम मांगा। माली ने कहा कि यदि आम खाये बिना नहीं रहा जाता, तो तुम तोड़ लो! बस, तुरन्त ही आम की सब डालियां इतनी झुक गईं कि आम सिंहासन पर आगये। अल्ह जी ने ठाकुर जी को आम का भोग लगाया। माली ने जाकर राजा से यह चरित कहा। राजा दौड़ा आया और चरणों में पड़ कर विनय करने लगा कि आपके चरणों के प्रभाव से मैं, यह बाग और सब देश पवित्र हुआ, अब कुछ विशेष कृपा करनी चाहिये। अल्ह जी ने दया कर के उसको भगवत् शरण और भक्त कर दिया! हे संसारी! भगवद्भक्ति और भक्तों का ऐसा प्रताप है कि शिव ब्रह्मादिक उनके चरणों में मस्तक झुकाते हैं, यदि एक वृक्ष झुक गया, तो क्या आश्चर्य है?

छप्पय—वाह! अल्ह जी वाह! भक्त तुम सा को दूजा।
प्रेम सहित उपकार नित्य की भगवत् पूजा ॥
झुका आम की डाल, आम का भोग लगाया।
दिखला भक्त प्रभाव भूप हरि भक्त बनाया ॥
भोला! भगवद्भक्ति की, माया अपरम्पार है।
झुकें शिवादिक भक्त पद, झुकी यहां तो डार है ॥

कथा पृथिवी राज की।

बीकानेर के राजा पृथिवीराज कल्याण सिंह के पुत्र परम भगवद्भक्त थे, भाषा में कवित्त दोहा और संस्कृत में श्लोक रचना करके अति प्रेम से कीर्तन किया करते थे, पिंगल आदि के ज्ञाता थे और इनकी काव्य बड़ी ललित होती थी। भगवत् सेवा में निष्ठा वाले और इन्द्रिय सुख के ऐसे त्यागी थे कि उमर भर स्त्री की ओर नहीं देखे थे। कहीं परदेश में संयोग वश

गये, वहां मंदिर में सेवा मूर्ति का मानसी ध्यान करने लगे, दो दिन तक भगवत् का स्वरूप ध्यान में न आया, तीसरे दिन मनमें दर्शन हुआ। वृत्तांत पूछने के लिये सांडनी दौड़ाई, तो राज मंत्रियों ने पत्री लिखी कि मंदिर की मरम्मत होने से दो दिन श्री नाथ जी दूसरे स्थान पर थे, मन्दिर में नहीं थे। यह सुन कर राजा का संदेह दूर हुआ, और वे बहुत आनन्दित हुये।

राजा ने अपने मन में मथुराजी में प्राण त्यागने का प्रण किया था। यह वृत्तान्त सुनकर बादशाह ने द्वेष के कारण उनको काबुल की लड़ाई पर नियुक्त कर दिया, राजा का इस यात्रा में एक २ दिन कल्प के समान बीतने लगा क्योंकि जीने की अवस्था थोड़ी सी शेष रह गई थी। जब उनके प्रण का दिन निकट आया, तो भगवत् ने वह दिन राजा को जता दिया। राजा तुरन्त ही सांडनी पर बैठ कर मथुरा जी में आये और प्रण पूरा होगया यानी शरीर त्याग कर परम धाम को प्राप्त हुये। सारे संसार में जय २ की ध्वनि फैल गई और भक्ति और भगवद्भक्तों का निर्मल यश संसार में विख्यात हुआ।

एक बार विदेश यात्रा में संयोग वश जंगल में वास हुआ और सेना के खाने पीने का कुछ सामान न मिला। भगवत् ने भक्तवत्सलता से वहां एक बड़ा भारी नगर प्रकट कर दिया और सेना को सब प्रकार से सुख मिला!

कुं:—राजा बीकानेर के, पृथिवीराज सुजान।
काव्य ललित रचि विविध विधि, कीन्हे हरिगुण गान॥
कीन्हे हरिगुण गान, रात दिन ध्यान लगाये।
मथुरा त्यागत प्राण, दौड़ काबुल से आये॥
भोला! बसे एकांत, फिरे मत भाजा।
निशदिन भज श्रीनाथ, जिन्हें सम भिक्षुक राजा॥

कथा धनाभक्त की।

धना जाति के जाट परम भक्त थे। इनके भक्त होने का यह वृत्तांत है कि जब यह लड़के थे, तब इनने घर पर एक भगवद्भक्त ब्राह्मण आया। जब वह भगवत् की सेवा पूजा करने लगा, तो धनाभक्त उस से कहने लगे कि मूर्ति हमको भी दो कि हम भी सेवा पूजा किया करें। ब्राह्मण ने पहिले तो मना किया जब इन की हठ देखी, तो छोटासा एक काला पत्थर दे दिया। धना जी ने बड़ी प्रीति से उसको शिर आंखों से लगाया और सेवा आरम्भ की। प्रथम आप स्नान किया, फिर भगवत् को स्नान करा कर तालाब की मिट्टी का तिलक लगाया, तुलसी दल के स्थान पर हरी पत्ता चढाई और बड़े हर्ष से साष्टांग दंडवत् की। जब उनकी माता रोटा लाई तो भगवत् के सामने रख कर और आंखें बन्द करके बैठ गये। बड़ी देर तक बाट देखते रहे कि भगवत् भोग लगावें परन्तु जब भगवत् ने भोग न लगाया, तो उदास और दुःखी हो कर हाथ जोड़े बैठ रहे फिर बालहठ से बहुत देर तक प्रार्थना करते रहे, तो भी भगवत् ने भोजन न किया! तब इन्हों ने रोटियां तालाब में फैंक दीं और आप भी अन्न जल बिना रह गये। कई दिन इस प्रकार बीते और भूख प्यास से विह्वल होकर मरने के निकट हुये। भगवत् को करुणा आई और उन्होंने प्रकट होकर भोजन करना आरम्भ किया। जब आधा भोजन कर चुके तो धना जी बोले कि क्या सब तुही खा जायगा? कुछ मुझको भी देगा या नहीं? भगवत् ने हंस कर बची रोटी धना को देदी। इसी प्रकार नित्य की व्यवस्था होगई! धना जी ने भगवत् का परम मनोहर रूप जो देखा, तो ऐसी प्रीति हुई

कि यदि एक क्षण रूप को ध्यान में अथवा प्रत्यक्ष न देखें, तो बेचैन हो जांय ! भगवत् ने देखा कि जिस की रोटी बिना परिश्रम खाते हैं, उसकी कुछ टहल भी करनी चाहिये क्योंकि किसी का फोकट का खाना अच्छा नहीं है। ऐसा विचार कर धनाभक्त से पूछ गौ चुगा लाया करें !

एक बार वही ब्राह्मण आया, धना को सेवा पूजा करते न देखा, तो कारण पूछा। धनाजी कहने लगे कि महाराज ! भली पूजा दे गये, कितने दिनों तक मुझे भूखों मारा, अब बड़ी कठिनाई से ऐसा सीधा होगया है कि गाय तक चुगा लाता है। ब्राह्मण बड़ा आश्चर्य में हुआ, कहने लगा कि मुझे भी दिखलाओ ! धनाजी ने ब्राह्मण को भी दर्शन कराया ब्राह्मण कृतार्थ हो गया। पश्चात् भगवत् की आज्ञा से काशी जी में जाकर रामानन्द जी से मन्त्र उपदेश लेकर गुरु की आज्ञानुसार घर में आकर साधु सेवा में लीन रहे।

एक दिन खेत में बोने को गेहूं लिये जाते थे, साधु आगये, गेहूं साधु सेवा में लगा दिये। माता पिता के भय से खेत को जैसा बोने पर बनाके छोड़ देते हैं, वैसा ही बनाकर छोड़ दिया। भगवत् ने उस खेत को ऐसा अच्छा जमाया कि सब लोग बड़ाई करने लगे। धना जी हंसी समझ कर एक दिन खेत की तरफ गये तो क्या देखते हैं, कि सब लोगों का कथन सत्य है। भगवत् की कृपा देखकर परमानन्द में डूब गये और भगवत् और भगवद्भक्तों की सेवा में लवलीन रहने लगे !।

कं०—सच्चा भगवत् भक्त वर, धना जाट जगमन्य।
काला पत्थर पूज कर, भगवत् किये प्रसन्न॥
भगवत् किये प्रसन्न, अन्न का भोग लगाया।
गाय चराई नित्य, ग्वाल बनकर यदुराया॥
उपजाया प्रभु खेत, बीज बिनु सब से अच्छा।
भोला ! भज श्रीकृष्ण, भक्त हो हरिका सच्चा॥

कथा देवा जी की।

उदयपुर के निकट रूप चतुर्भुज स्वामी का एक मंदिर है। देवा नामक वहां का पुजारी ब्राह्मण वृद्ध हो गया था। एक दिन गद्दी के मालिक राना उदयपुर मंदिर में आये तो देवा रात को भगवत् को शयन कराके फूलों की माला उतार कर अपने शिर पर लपेट कर कपाट बंद कर चुके थे। जब राना मंदिर में पहुंचे तो देवा ने अपने शिर पर से माला उतार कर राना के गले में डाल दी। संयोग वश उस माला में एक श्वेत केश राना को दिखाई दिया। राना ने पुजारी से पूछा कि क्या भगवत् के केश श्वेत हो गये हैं। देवा ने कहा कि हां महाराज ! सफेद होगये हैं। राना ने कहा कि अच्छा ! हम भी प्रातः देखेंगे। यह कह कर राना तो चले गये और देवा जी यह बात अपने मुख से निकल जाने से भयभीत हुये और सिवाय भगवत् के दूसरा रक्षक न देख कर कहने लगे कि हे हृषीकेश ! हे स्वामिन् ! न तो मुझ में आप की भक्ति है, न सेवा पूजा में विश्वास है परन्तु आप के चरण कमलों के सिवाय कोई शरण और रक्षा का स्थान नहीं है कि वहां जाऊं, मेरी लज्जा अब आप के ही हाथ है, चाहे सो करो ! अपने भक्त की यह विनती सुन कर भगवत् ने करुणायुक्त होकर उसी क्षण अपने श्रीअंग पर श्वेत केश धारण कर लिये। प्रभात को देवा ने मन्दिर के कपाट खोले, तो क्या देखता है कि भग-

वत् ने श्री अंग पर श्वेत केश धारण कर रक्खे हैं! भगवत् की ऐसी करुणा और दयालुता देख कर प्रेम में ऐसे वे सुध हो गये कि शरीर की भी सुध बुध न रही जब शरीर की सुध आई तो भगवत् के करुणा, दयालुता आदि गुणों का और अपनी विमुखता का शोच करते हुये भक्ति भाव में छके हुये भगवत् की महिमा का मन में वर्णन कर रहे थे। इतने ही में राना आकर भगवत् के शरीर पर सफेद केश देख कर विचार करने लगा कि इस ब्राह्मण ने किसी के सफेद बाल लगादिये हैं। परिक्षा के हेतु एक केश खींचा, क्लेश के कारण भगवत् नासिका सकोड़ ने लगे, पीछे वह बाल टूट गया और रुधिर की धार इस वेग से निकली कि राना के कपड़ों पर छींटें पड़ गये। यह वृत्तांत देख कर राना मूर्छा खाकर गिर पड़े और एक पहर तक अचेत पड़े रहे, पश्चात् उठ कर देवाके चरणों में पड़े और अपराध क्षमा करने के लिये विनय करने लगे! भगवत् की आज्ञा हुई कि अब से राना के वंश में जब तक कुंवर रहे तब तक दर्शन करने को मन्दिर में आवे राज्य तिलक हो जाने के बाद दर्शन करने न आवे। अब तक यह रीति वर्तमान है।

कथा दो लड़कियों की।

एक लड़की किसी जिमींदार की और दूसरी एक राजा की दोनों भगवत् कृपा के प्रभाव से उस पदवी को प्राप्त हुई कि अब तक उनकी कथा भक्तों के मुख से सुनने में आती है। वृत्तान्त यह है कि एक बार राजा के गुरु आये हुये थे। दोनों लड़कियों ने उनसे भगवत् मूर्ति मांगी। उन्होंने बालापन देख कर एक २ टुकड़ा पत्थर का देकर नाम शिल्प जी बतला दिया और इतना उपदेश कर दिया कि मन लगा कर सेवा पूजा करती रहना, संसार समुद्र से पार हो जावोगी दोनों बड़भागिनी अत्यन्त विश्वास और प्रेम से पूजा करने लगी। हे मंसाराम! यहां तक कि उनके हृदय में भगवत् का रूप प्रकाशित हुआ। इतनी कथा दोनों की मिला कर कही, अब अलग २ दोनों का वृत्तांत कहता हूं।

जमींदार की लड़की का चाचा अपने भाई यानी लड़की के बाप से शत्रुता रखता था एक दिन वह गांव पर चढ़ आया और गांव को लूट ले गया। लूट के साथ लड़की की सेवामूर्ति भी चली गई। लड़की अत्यंत विकल हो गई क्योंकि उसके लिये सारा संसार अंधकारमय होगया, प्राण पीड़ा से भी अधिक पीड़ा हुई, खाना, पीना, सोना आदि सब छूट गया। सब के कहने से वह अपने चाचा के घर गई, चाचा चौबारे में बैठा था, बहुत से मनुष्य भी उसके पास एकत्र थे, जब लड़की ने मूर्ति मांगी, तो कहने लगा कि पहिचान कर ले जा! किसी ने हंसी से कहा कि ठाकुर जी को पुकार, यदि उनको तेरे साथ प्रीति होगी, तो आजांयगें! लड़की की रोते२ आंखें सूज गई थीं, गला पड़ गया था, बड़े कष्ट से दीन होकर पुकारी हे शिल्पजी महाराज! अपनी दासी को क्यों छोड़ आये? आप कहां हैं,? भगवत् इस करुणाजनक शब्द के सुनते ही तुरन्त आकर उस बड़भागिनी की छाती से लिपट गये! मरती हुई को प्राण दान देकर जिला दिया और दोनों गांव वालों को अपनी भक्ति का परिचय दिया!

राजा की लड़की भगवत् प्रेम में पूर्ण रंग गई थी परन्तु एक भगवद्विमुख पुरुष के साथ उसका विवाह हो गया था, जब वह लेने को आया, तो लड़की को भगवत् सेवा की बड़ी चिन्ता हुई। नितान्त जब

माता ने विदा कर दिया, तो उसने अपने प्राणप्रीतम को डोले में बैठा लिया, उनके सिवाय किसी लौंडी बांदी को साथ न लिया मार्ग में वह विमुख पास आया और बात चीत करने को चाह से बुलाने लगा। लड़की कुछ न बोली, तब कहने लगा कि तुम क्यों नहीं बोलतीं ? बताओ तुम को कौन सा दर्द है, उसका उपाय किया जाय, लड़की ने कहा कि यदि तुम को मुझ से बोलने की इच्छा हो, तो भगवद्भक्ति अंगीकार करो, नहीं तो मुझे स्पर्श मत करो। उसे क्रोध आया और उसने भगवत् सेवा की पिटारी नदी में फेंक दी। लड़की स्वामी के वियोग से अत्यन्त व्याकुल और दुखी हुई, खाना, पीना विष हो गया, उस विमुख ने उसे प्रसन्न करने को बहुत उपाय रचे परन्तु कोई उपाय काम न आया, घर पर आकर उसने सब वृत्तान्त कह दिया। स्त्रियों ने बहुत भांति समझाया, सास स्वयं अपने हाथ से भोजन कराने लगी परन्तु बड़भागिनी का मन भगवच्चरणों में दृढ लगा रहा, उसने किसी की कुछ न सुनी और न कुछ खाया पीया। जब सास आदि सब उपाय करके हारगई तो अंत में सब उसी नदी पर आये, जहां पिटारी पानी में डाली गई थी। बड़भागिनी करुणा से भरी हुई रुदन करती हुई पुकारने लगी हे स्वामी। शिल्पजी महाराज ! कहां हो ? आप दासी से क्यों रूठ गये हो यदि आप को बहुत पानी में स्नान करना था, तो मैं गंगा जी में स्नान कराती, अब कृपा करो, दर्शन दो ! जैसे कामी पुरुष सुन्दर नायिका के पराधीन होता है, इसी प्रकार भगवत् अपने भक्त के वशीभूत हैं, करुणा के वचन सुनकर तुरंत ही अपनी वियोगिनी, विरहिन को दर्शन देकर, उसका प्राण बचालिया ! सब का भक्ति का विश्वास हुआ और सब भगवद्भक्त हो गये।

कुं-गाथा शिल्पी देव की, को नहिं सुन हर्षाय।
पापी भी निष्पाप हो, ताप सकल मिट जाय॥
ताप सकल मिट जाय, कथा शिल्पी की सुनकर।
भक्तातुर सुनि वाक्य, दौड़ि आवे करुणाकर॥
भोला ! तज अभिमान, झुका सबही को माथा॥
पत्थर में हरि देखि, पाठ करि शिल्पी गाथा।

कथा संतदास जी की।

निवाई गांव में विमलानन्द के प्रबोध वंश में संतदास जी परम भक्त हुये। जिस प्रकार अपनी स्त्री सहित राजा पृथु ने भगवत् सेवा की थी, इसी प्रकार संतदास जी ने भगवत् सेवा की। अपनी वाणी की रचना में भगवत्, भक्ति और भक्त तीनों का प्रताप बराबर लिखा। इनका काव्य सूरदास जी की काव्य के समान है। भगवत् के जन्म, कर्म, लीला और चरित्रों को ऐसी मधुर और ललित वाणी में बनाया है कि मन अवश्य नरम होकर भगवच्चरणों में लग जाता है, एक बार इनके मन में आया कि भगवत् को छप्पन प्रकार का भोग लगाना चाहिये। ध्यान में ही भोग लगाने लगे। जगन्नाथ राय जी ने अपने सच्चे भक्त का मानसी भोग अंगीकार किया, पुजारियों के धरे हुये थाल का भोग न लगाया और राजा को स्वप्न में आज्ञा की कि संतदास के घर हमारा निमंत्रण था, उसने ऐसा भोजन कराया कि स्वादिष्ट और मधुर होने के कारण बहुत सा खागये, इसलिये भूख नहीं लगी। राजाने संतदास जी की भक्ति और प्रताप का विश्वास किया और भगवद्भक्तों के भक्तिभाव की वृद्धि हुई।

कुं:-गावै भगवत् गुण विमल, संतदास कविराय।
जाय पिघल मन पढ़त हो, हरि संमुख होजाय ॥
हरि संमुख हो जाय, काव्य अति ललित मनोहर।
मन हो कृष्णाकार, शुद्ध निर्मल सुख सागर ॥
ध्यान लगावा भोग, पेट भर भगवत् खावै।
भोला ! हो कल्याण, विमल भगवत् गुण गावै ॥

कथा साखी गोपाल की।

गौड़ देश के रहने वाले दो ब्राह्मण थे। उन में एक बूढा और कुलीन था और दूसरा जवान और सामान्य कुल का था। दोनों तीर्थ यात्रा में साथ २ रहे। जहां तहां दर्शन करके जब वृन्दावन में आये तो बूढा ब्राह्मण बीमार होगया। जवान ब्राह्मण ने उसकी अच्छी प्रकार से सेवा की। जब उसे आराम हो गया, तो उसने प्रसन्न होकर अपनी लड़की का विवाह उसके साथ करने को वचन दिया और जवान ब्राह्मण ने बहुत कुछ कहने सुनने पर अंगीकार कर लिया। साक्षी चाहा तो वृद्ध ब्राह्मण ने श्री गोपाल जी को साक्षी दिया। जब दोनों अपने घर घर आये तब युवा ब्राह्मण ने वचन पूरा करने को कहा। परन्तु वृद्ध की स्त्री और पुत्रने अपनी कुलीनता और प्रतिष्ठा के कारण वृद्ध ब्राह्मण का कहना न माना। पंचायत हुई और पंचोंने साक्षी मांगी। जवान ब्राह्मण ने कहा कि जहां गोपाल जी साक्षी हैं वहां अन्य साक्षी का क्या प्रयोजन है? पंचों ने कहा कि गोपाल जी आकर गवाही दें, तो निस्सदेह विवाह हो जायगा। इस बात की लिखन पढ़त होगई। ब्राह्मण वृन्दावन में आया और श्रीगोपाल जी के मंदिर में जाकर चलने के लिये निवेदन करने लगा। कितने दिनों तक इसी आशा में फिरता रहा, जब भगवन् ने उसका विश्वास अच्छी तरह से देख लिया, वो कहने लगे कि कहीं प्रतिमा भी चलती होगी? ब्राह्मण ने विनय किया कि यदि प्रतिमा चलती नहीं है, तो बोलती कैसे है? योगेश्वर भगवान् निरुत्तर हुये और साथ हो लिये परन्तु उस ब्राह्मण से कहने लगे कि जहां तू पीछे फिर कर देखेगा, वहां ही मैं खड़ा हो जाऊंगा। उसने कहा कि जो ऐसा है, कि हजारों उपाय और परिश्रम करने पर भी महादेव आदि के मन में से भाग जाता है और जिसने गोपियों का माखन और दही चुरा २ कर खूब खाया और जब उन्होंने पकड़ना चाहा, तो भाग गया, उसका कैसे विश्वास हो कि पीछे २ आता है या नहीं, इसलिये साथ २ चलना चाहिये। भगवत् ने हंसकर कहा कि हमारे नूपुर की ध्वनि तेरे कान में पड़ती रहेगी। ब्राह्मण ने मान लिया। आगे २ ब्राह्मण पीछे २ गोपाल जी चल दिये। जब गांव के समीप पहुंचे तो ब्राह्मण की कामना हुई, कि अब तो रूप अनूप को आंख भर कर देख लेना चाहिये। इस चाहना में प्रबन्ध की बात भूल गया और पीछे फिर कर देखने लगा। भगवत् वहीं खड़े हो गये और ब्राह्मण आज्ञा लेकर गांव में गया। श्रीगोपाल जी महाराज के आने का वृत्तांत कह कर पंचों को ले आया। भगवत् ने दोनों ब्राह्मणों में जो बात ठहरी थी। कह दी। सब को भगवत् भक्ति और भक्तों का विश्वास हुआ और उस ब्राह्मण का विवाह बड़े हर्ष के साथ हुआ। अब तक श्री गोपाल जी महाराज पुरुवान गांव में श्री जगन्नाथ राय जी के मंदिर से पांच कोस पर बिराजमान हैं, साक्षी गोपाल नाम से विख्यात हैं। जो कोई जाता है। दर्शन पाता है।

मुझसे कभी नहीं होसक्ता। स्त्री शोर मचानेलगी, बहुत से लोग एकत्र होगये, स्त्री कहने लगी कि इस आदमी को साधु जान कर दिया था, इसने मेरे पति का शिर काट डाला है और मुझे साथ चलने को कहता है लोग सदन जी को पकड़ कर हाकिम के पास ले गये। जब इनसे पूछा गया तो कहने लगे कि हां मुझ से अपराध हुआ है, हाकिम ने सदन जी के हाथ कटवा डाले। अपने पूर्व पाप का फल समझ कर इस कष्ट में भी सदन जी भगवत् के ध्यान स्मरण में मग्न होते हुये जगन्नाथ जी चल दिये।

जब पुरी के पास पहुंचे तो जगन्नाथ जी ने प्रसन्न होकर अपनी सवारी की पालकी सदन के निमित्त भेजी। सदन जी मर्यादा को देख कर पालकी पर न चढ़े। जब सब ने बहुत कहा, तब भगवत् की आज्ञा का उल्लंघन करना उचित न समझ कर सवार होकर श्री दरबार में पहुंचे और भगवत् के दर्शन पाने से अपने को कृतार्थ समझ कर उन्होंने दंडवत् की। उसी क्षण हाथ जैसे थे, वैसे हो गये और जन्म जन्मान्तर के दुःख दूर हो गये। हे संसाराम! भगवत् भक्ति का निस्संदेह ऐसा ही प्रताप है। महाभारत में भगवत् का वचन है कि जिसको मेरी भक्ति नहीं है, वह चारों वेद पढ़ा हो, तो मुझे प्यारा नहीं है और जो मेरा भक्त है, वह यदि चांडाल भी हो, तो भी अत्यन्त प्यारा है और वह ही पूजने योग्य है। यह ही बात एकादश स्कंध में भागवत् में उद्धव से कही है।

कुं०-सदन कसाई भक्तवर, भगवत् लिये रिझाय।
वैष्णव घर ठहरे नहीं, गये सदन गर आय॥
गये सदन घर आय, भक्ति महिमा दिखलाई।
आवत जाना भक्त, लेन पलकी भिजवाई॥
चंगे कीन्हे हाथ, त्याग भोला! चतुराई।
भज निशिदिन जगदीश, सीख ही सदन कसाई॥

कथा कर्मानन्द जी की।

कर्मानन्द जी जाति के चारण रजवाड़े में भगवद्भक्त और वैराग्यवान् हो चुके हैं, इनके काव्य का ऐसा प्रभाव है कि कोई कैसा ही कठोर चित्त हो, पढ़ सुन कर द्रवीभूत हो जाता है। संसार को असार और अनित्य जान कर यह घरबार को त्याग कर तीर्थ यात्रा को चल दिये। भगवत् सिंहासन शिर पर रख लिया और एक छड़ी हाथ में लेली। मार्ग में जहां कहीं यह टिकते, छड़ी धरती में गाड़ देते और शालिग्राम जी का बटुवा उसी की शाखा पर झूले के समान विराजमान कर देते थे। एकबार छड़ी भूल गये, चित्त भगवच्चरणों में था, इसलिये मार्ग में भी सुध न आई। जब टिकने के स्थान पर पहुंचे तो भगवत् के विराजमान करने की अपेक्षा हुई, तब स्मरण हुआ। अत्यन्त प्रेम से कहने लगे कि झाड़ू देने वाला, पानी भरने वाला रसोई करने वाला, सवारी देने वाला, सब सेवा करने वाला यह नौकर है क्या जो कार्य मालिक के करने का है, वह भी नौकर के ही जिम्मे रक्खा है? भाव यह है कि अन्तःकरण के प्रेरक तो आप हैं, छड़ी भूल गये, स्मरण न हुआ, तो इसमें दोष किस का है? भगवत् प्रेमयुक्त अटपटी वाणी सुन कर प्रसन्न होकर तुरन्त ही छड़ी मंगा दी!

कु०-चारण कर्मानन्दजी, छोड़ा सब घर बार।
हरि सिंहासन शीश धरि, यात्रा की यक बार॥
यात्रा की यक बार, छड़ी मग मे बिसराई।
मार्मिक सुनकर बात, तुरत भगवत मँगवाई॥

कुं:—शरणागत प्रतिपाल हरि, नटवर दया निधान।
वृन्दावन निजधाम तज आये गांव घुड़दान॥
आये गांव घुड़दान भक्त की दीन्ह गवाही॥
करा भक्त का लग्न, भक्ति की रीति जनाई।
भोला! भज गोपाल, कार्य दूजा कुछ कर मत॥
करुणा कर जनपाल, देव पालक शरणागत॥

कथा सींवां की।

कावा जाति के सांगन राजा के पुत्र सींवां द्वारका देश में परम भगवद्भक्त हुये। यद्यपि कामध्वज बड़े त्यागी विख्यात हैं परन्तु यह राज्य काज करते हुए और ऐश्वर्य के सब पदार्थ पाने पर भी मन से त्यागी होने से कामध्वज से अधिक त्यागी थे। वीर उदार और पराक्रमी ऐसे थे कि भगवत् को सहायता दी। वृत्तांत यह है कि एक बार अजीजखां नामी बादशाह जनरल बड़ा कटक लेकर द्वारका पर चढ़ गया, रणछोर जी के मन्दिर और पुरी में आग लगा दी और लोगों पर नाना प्रकार का उत्पात आरंभ किया। भगवत् ने सींवां से सहायता चाही। सींवां ने कुछ सवारों सहित द्वारका में पहुंच कर बड़ा भारी युद्ध किया, कटक समेत अजीजखां को यम लोक पहुंचा कर आप भगवत् लोक में वास किया।

कुं:—कावा सींवां भक्तवर, भये द्वारका देश।
कामध्वज विख्यात से, त्यागी हुये विशेष॥
त्यागी हुये विशेष, यवन यमलोक पठाये।
भगवत का करि कार्य, आप हरि लोक सिधाये॥
भोला! भज विश्वेष, विश्व है मात्र भुलावा।
माया दल दे मार, यवन ज्यों मारे कावा॥

कथा सदनजी की।

सदन जी जाति के कसाई परम वैराग्यवान् भक्त थे। जिस प्रकार तपाने से सोना अवगुण रहित हो जाता है, इसी प्रकार सदन जी के पुण्य से पूर्व जन्मोंके पाप दूरहोगये थे। औरों से मांस लाकर बेचा करते थे। हिंसा नहीं करते थे। शालिग्राम की मूर्ति पास रखते थे, इसी से सेर दो सेर, पांच सेर, दशसेर जो कोई मांगता था, तोल देते थे। एक वैष्णव ने मन में विचार कर कि यह मूर्ति ऐसी वृत्ति वाले के पास रहना उचित नहीं है, सदनजी से मूर्ति मांगी, उन्होंने तुरन्त देदी। शालिग्राम ने स्वप्न में साधु से कहा कि जहां से हमको लाया है, वहीं पहुंचा दे! साधु ने कहा कि महाराज! कसाई के यहां आप का निवास अयोग्य है। तब भगवत् ने कहा कि हम को उस से बड़ी प्रीति है, उसकी तराजू के पलरे में हम झूला झूलते रहते हैं, जो २ वह मोल की बातें करता है, उन्हें हम कीर्तन मानते हैं। साधुने सदन जी से जाकर सब वृत्तांत कहा और मूर्ति उनको देदी।

सदन जी उसी दिन घर बार त्याग कर मूर्ति को शिर पर रख कर जगन्नाथ राय जी को चले, एक स्त्री सदन जी को युवा और सुन्दर देख कर उन पर आसक्त हो गई। इसने उन्हें अपने घर टिका लिया, अच्छा २ भोजन कराया, रात को उनसे कहा कि मुझे अपने साथ ले चलो! सदन जी ने कहा कि मेरी गर्दन काट डालो तब भी मुझ से यह नहीं होगा! उसने कुछ और ही समझ कर तुरन्त घर में जाकर अपने पति का शिर काट कर इन से आकर वृत्तांत कहा और कहने लगी कि अब बेखटके तुम साथ ले चलो! सदन जी ने कहा कि हे मतिहीन? यह

भोला ! प्रभु मत भूल, कृष्ण कारण के कारण ।
जो सब को ही भूल, यही सिखलाते चारण ॥

भगवान् भक्ताधीन हैं

[ले० श्री हीरालाल जी अग्रवाल]

धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में महाभारत की प्रसिद्ध लड़ाई हो रही थी। बड़े २ योद्धा तथा महारथी अपने २ पराक्रम दिखा लोगों को आश्चर्यान्वित कररहे थे और शत्रु सेना का संहार करने में वीरता दिखा रहे थे। नवें रोज की लड़ाई का रूप बड़ा विकराल हो गया। पांडवों की सेना ने कौरव दल को व्याकुल कर दिया और उनकी सेना का ऐसा संहार किया कि कौरवों का साहस पीछे पड़ गया और वे बड़े चिन्तित तथा व्याकुल हो गये।

युद्ध स्थगित होने पर रात्रि में कौरव पक्ष के योद्धा दुःशासन, शकुनि, कर्ण तथा दुर्योधन आदि इकट्ठे हुये और आज के युद्ध की प्रगति और सेना का संहार देख उनको जो घबड़ाहट हुई थी उस पर मन्त्रणा करने लगे। दुर्योधन ने उदास मुख कहा-'वीर योद्धागण ! आज का युद्ध देख मुझे निश्चित मालूम होता है कि यदि यही क्रम जारी रहा तो तीन चार रोजमें हमारी सारी सेना मारी जायेगी और हम लोगों की हार होने में सन्देह नहीं रहेगा। हमारी ओर इतने बड़े बड़े वीर और भीष्म पितामह ऐसे सेनापति के रहते हुये अब सेना कट रही है तो हमारे नाश होने में भी अब देर नहीं लगेगी इसलिये अब कोई ऐसा उपाय ढूंढना चाहिये जिससे पांडवों का शीघ्र नाश होजाये।' कर्ण से न रहा गया उसने कहा-'हे वीर केसरी दुर्योधन ! इसमें हताश होने की कोई बात नहीं। अकेले भीष्म पितामह चाहें तो पृथ्वी को अपांडवी कर दें क्योंकि उनका पराक्रम आप लोगों को विदित नहीं। किन्तु बात ऐसी है कि वह पांडवों का पक्ष करते हैं और कौरव तथा पांडवों को एक समान देखते हैं इसलिये पांडवों पर बाण नहीं चलाते नहीं तो भला उनके बाण की चोट से कौन बच सकता है। उन्होंने तो स्वयं कहा है कि मैं पांडवों की सेना को मारूंगा परन्तु पांडवों को नहीं। भला ऐसी दशा में पितामह को सेनापति पद पर रखने से हानि छोड़ लाभ की आशा क्योंकर की जा सकती है ? यदि मैं इस पद पर होता तो पांडवों को कब का रसातल भेज दिया होता और विजय पता का फहरा देता। इसलिये हे नरशार्दूल ! आप भीष्म जी से कहिये वह सेनापति का पद त्याग करदें और अस्त्र शस्त्र किनारे रख गंगातीर पर निवास करें। इस बात से भीष्म जी क्रोधित हो सेनापति पद त्याग करेंगे और तुम्हारा काम बन जायेगा।" सभी लोगों ने यह बात सहर्ष स्वीकार की और कर्ण की बड़ी प्रशंसा की।

दुर्योधन भीष्म पितामह के पास गया और उन्हें प्रणाम कर खड़ा रहा। भीष्म पितामह ने पूछा "हे दुर्योधन इस समय तुम यहां आए हो ? क्या तुम्हें कुछ कहना है ?" दुर्योधन ने उत्तर दिया "आज का युद्ध देख हम भयभीत होगए हैं और जय की आशा से मुख मोड़ लेना पड़ा है। आप के रहते हुए हमारी असंख्य सेना का संहार हो यह हम से सहन नहीं होता। इससे विदित होता है कि

आप पांडवों का पक्ष करते हैं। यदि आप सेनापति पद परित्याग करदें और कर्ण उस पद को ग्रहण करे तो देखिए कितना शीघ्र पांडवों का नाश होजाता है। हे गांगेय ! आप युद्धक्षेत्र तथा शस्त्रास्त्र छोड़ गंगातीर पर निवास करें मैं आपके सुविधे के लिए हर प्रकार सामग्री और दास दासियों का प्रबन्ध कर दूंगा जिसमें आपको किसी प्रकार का कष्ट न हो।" क्षत्रिय के लिये युद्ध क्षेत्र से मुंह मोड़ना और गंगातट पर निवास करना बड़ा अपमान जनक है। जीवन की अपेक्षा मृत्यु श्रेष्ठ है। भीष्म पितामह ने क्रोध को शमन कर स्वाभाविक हास्य से उत्तर दिया- दुर्योधन ! तुम इस युद्ध का रहस्य नहीं समझते। स्वय आनन्दकन्द श्री कृष्णचन्द जिसके सखा हैं और सारथी का काम करते हैं उस पर विजय पाना खेल नहीं है। अर्जुन भी कम पराक्रमी नहीं हैं। धनुर्विद्या में उसकी समता करने वाला विरला ही होगा इस पर भी मैं प्रतिज्ञानुसार प्रतिदिन दश-हजार सेना का संहार करता हूं इसे कदाचित् तुम भूल बैठे हो। इसपर भी यदि तुम कहते हो कि मैं पांडवों का पक्ष करता हूं तो मेरी यह प्रतिज्ञा है कि कल के युद्ध में 'मैं नहीं या पांडव नहीं।'

दुर्योधन हर्षित होता हुआ अपनी शिविर में गया और कल अपांडवी पृथ्वी होगी यह समाचार कह सुनाया। बिजली की भांति यह खबर कौरवोंकी सेना में फैल गई और बड़ा कोलाहल हुआ। दुर्योधन आदि का कलेजा ठंडा हुआ और दिन होने की प्रतीक्षा करने लगे। उधर पांडवों को जब यह बात विदित हुई तो वे बड़े चिन्तित हुये क्योंकि पांडव भीष्म पितामह के बल, पराक्रम और प्रतिज्ञा से भली भांति परिचित थे। उन्हें निश्चय होगया कि कल पृथ्वी पांडवों से रहित होजायेगी। स्वयं भीम देव और अर्जुन जो बड़े बली थे हिम्मत हार बैठे क्योंकि वे जानते थे कि भीष्म पितामह अजेय, सत्यवादी, नैष्ठिक बाल ब्रह्मचारी, परमात्मा के परम भक्त, सत्य प्रतिज्ञ, और योगी हैं। युधिष्ठिर तथा अर्जुनादि ने बड़ी देर तक विचार किया लेकिन भीष्म जी के बाण से बचने को कोई उपाय नहीं देख पड़ा। पांडवों को चिन्तित देख द्रौपदीने कहा-'मेरी समझ में यदि इस समय श्री कृष्ण से परामर्श लिया जाये तो संभव है आपकी रक्षा हो।' तुरन्त भगवान् श्रीकृष्ण के पास आदमी भेज कर उन्हें बुलवाया गया और पांडवों ने उन्हें भीष्म प्रतिज्ञा का सारा वृत्तान्त कह सनाया।

केशव थोड़ी देर तक मौन रहे फिर बोले-"धर्म राज युधिष्ठिर ! आप बुद्धिमान् तथा विद्वान् हो। भीष्म पितामह की शक्ति तथा वीर्य को आप भली-भांति जानते हैं। भीष्म जी बाल ब्रह्मचारी और स्वच्छन्द मृत्यु हैं। किसी की सामर्थ्य नहीं कि उनका बाल भी बांका कर सके। अर्जुन ही उनके बाणों को काट सकने में यत् किञ्चित् समर्थ है परन्तु वह भी हार मानता है तब फिर पांडवों के नाश को कौन टाल सकता है। भीष्म पितामह की प्रतिज्ञा स्वयं परमात्मा भी नहीं तोड़ सकते क्योंकि भक्तों का दरजा भगवान् से बढ़ कर है और भगवान् सदैव भक्तों के आधीन हैं। मैं तो कोई उपाय नहीं बता सकता।"

यादव की यह बात सुन द्रौपदी बोली-"भाई कृष्ण ! क्या आप के रहते हुये पांडवों का नाश होगा और आप की बहिन विधवा हो जायेगी ? आप तो पांडवों के सखा हैं और जब २ उन पर विपत्ति पड़ी आपने उनकी रक्षा की है तो क्या इस समय उनकी मृत्यु

और अपनी बहिन का वैधव्य आप से सहन हो सकेगा ? लाक्षागृह से आपने हमारी और हमारे पतियों की रक्षा की, दुर्वासा ऋषि के कोप से हमें बचाया और भरी सभा में दुष्ट दुर्योधन ने जब मुझ रजस्वला का वस्त्र अपहरण करने की आज्ञा दी और दुःशासन बड़ी निर्दयता और निर्लज्जता से वस्त्र खींचने लगा उस समय भक्तवत्सल आपने मेरी लज्जा रखली तो क्या इस अवसर पर आप मुझे अनाथा होने से नहीं बचा सकते ? आपने ही तो प्रतिज्ञा की थी कि 'हे अर्जुन ये कौरव तो पहले ही मर गये हैं, तुम तो केवल निमित्त मात्र हो' क्या आज आप उस प्रतिज्ञा को भूल गये ? क्या आप पतिदेव भीम की उस प्रतिज्ञा को झूठी करेंगे जब दुष्ट दुःशासन ने लज्जा को तिलांजली दे मुझे पापी दुर्योधन की जंघा पर बैठने को कहा और भीम ने प्रतिज्ञा की कि जब तक दुर्योधन की जंघा के रक्त से मेरी (द्रौपदी की) वेणी न धोई जायेगी तब तक मैं (द्रौपदी के) बालों को न बांधूगा ! आप सर्व शक्तिमान् हैं आपके लिये यह बड़ी बात नहीं इसलिये हे कृष्ण ! मेरी रक्षा कीजिये। त्राहि माम् ! त्राहि माम् ! !"

भगवान् कृष्ण ने द्रौपदी को बहुत समझाया और प्रारब्ध की बलवती शक्ति को बताया लेकिन द्रौपदी एक से दो न हुई और बिलख २ कर रोने लगी। भगवान् ने उसे धीरज दिया और कहा 'बहिन! जब तुम नहीं मानती हो तो मैं एक युक्ति बताता हूं क्या तुम उसे कर सकोगी ? द्रौपदी ने कहा-"मैं सदा सर्वदा आपके साथ छाया के अनुसार चलने को तैयार हूं कहिये क्या आज्ञा है ?" कृष्ण ने कहा "क्या तुम इतनी रात को मेरे साथ चल सकोगी ?" द्रौपदी ने उत्तर दिया-"भला आप के साथ मुझे डर कैसा क्या सिंह की बहिन शशक से डर सकती है ? चलिये मैं तैयार हूं।"

चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ है। शान्ति देवी का राज्य स्थापित हो रहा है। पाण्डवों को भी यह भेद मालूम नहीं। आगे २ कृष्ण और पीछे २ द्रौपदी चली। बड़ी दूर तक जाने पर एक शिविर दिखाई पड़ी जो अलौकिक तेज से जगमगा रही थी। कृष्ण ने उस ओर संकेत कर कहा 'देखो उसी शिविर में तुम्हें जाना है। उसमें तुम्हारे ससुर और मेरे भक्त शितनिद्रा भीष्म पितामह लेटे हैं बस उन्हें जाकर प्रणाम करो इतने ही से तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी।" जाते २ द्रौपदी द्वार पर पहुँची। चारों ओर पहरेदार कड़ा पहरा दे रहे थे किन्तु द्रौपदी सती साध्वी और पतिव्रता थी इसलिये उसे कहीं आने जाने से रोक टोक न थी इसलिये वह भीतर चली गई। श्रीकृष्ण भी अपने योगबल से पहरेदार का रूप धारण कर शिविर के भीतर पहुंचे।

उस समय भीष्म पितामह परब्रह्म परमात्मा आनन्दघन श्री सच्चिदानन्द कृष्णचन्द्र के ध्यान में मग्न थे। द्रौपदी ने उन्हें प्रणाम किया। भीष्म पितामह ने 'अखण्ड सौभाग्यवती भव' कह कर आशीर्वाद दिया। पीछे जब भीष्म जी ने देखा तो देवी द्रौपदी को उदास चित्त सामने खड़ी देखी। उन्होंने उसे आने का कारण पूछा। द्रौपदी ने हाथ जोड़ कर निवेदन किया-"हे ससुर जी ! आपने इस अबला को विधवा बनाने की प्रतिज्ञा की है क्योंकि आप कल पृथ्वी को अपांडवी बनावेंगे और अपने पुत्रों को अपने हाथ से नाश कर धर्म पर अधर्म की विजय करावेंगे तथा हमें वैधव्य का दुःख होते देख कौरवों का कलेजा ठंडा करेंगे इसीलिये मैं आप का अन्तिम

दर्शन करने आई हूं क्योंकि मैं आज ही तक सधवा हूं कल से सौभाग्यवती के बदले अभाग्यवती कह लाऊंगी।'

भीष्म पितामह इन बातों को ताड़ गये और पूछा-"हे देवि! तुम इस अंधेरी रात में किस के साथ आई हो?" द्रौपदी ने उत्तर दिया-"सेवक के साथ।" भीष्म पितामह झटपट उठखड़े हुये और इस रहस्य को समझ गये। उन्होंने फिर पूछा-"वह कृष्ण परमात्मा (सेवक) कहां है शीघ्र बताओ" द्रौपदी ने उत्तर दिया-"वह शिविर के बाहर द्वार पर खड़े हैं।"

पितामह इतना सुन कोठरी के बाहर गये और देखा कि श्री कृष्ण परमात्मा चोबदार के रूप में खड़े हैं। देखते ही उनके चरणारविन्द को प्रेमाश्रु से भिगो दिया और कहने लगे-"हे केशव! हे जगत पालक हे गोवर्धनधारी! आपने इतना कष्ट क्यों उठाया क्या अब भी हमें सताना न छोड़ेंगे? क्या अब भी मेरी परीक्षा समाप्त न होगी? प्रभु! मैं तो आप के हाथ का खिलौना हूं इसे बनाना और बिगाड़ना तो केवल आपकी इच्छा पर निर्भर है तो फिर इतनी दूर पांव २ आने की क्या जरूरत थी। हे भक्त वत्सल! आप की इच्छा से वायु बहती है, सूर्य चमकता है, अग्नि जलती है, ब्रह्मा विष्णु और महेश सृष्टि, पालन और संहार करते हैं। बिना आपकी मर्जी के एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। आप बात की बात में राई को पर्वत और पर्वत को राई, रंक को राजा और राजा को रंक कर सकते हैं तो फिर मैं किस गिनती में हूं? भुवनेश्वर! जैसे सूर्य की किरण पड़ते ही बर्फ गल जाती है उसी प्रकार आप की इच्छा होते ही मेरा कहीं पता भी नहीं रह सकता। हे मधुसूदन! हे कृपालो! मैं तो सदा सर्वथा आप का सेवक हूं फिर आपकी आज्ञा मुझे अस्वीकार कैसे हो सकती है। हे जनार्दन! मैं आपकी शरणागत हूं अतएव आज्ञा दीजिये।"

भगवान् कृष्ण ने पितामह को उठा लिया और धीरज देकर मीठे शब्दों में कहने लगे-'हे भक्त! आप हम से श्रेष्ठ और पूज्य हैं मैं सर्वदा आप जैसे भक्तों के आधीन हूं इसलिये मैं आपका दास हूं आज्ञा दीजिये आपके लिये क्या करूं?' यह सुन भीष्म पितामह गद् गद् होगये और रूंधे कंठ से परमात्मा चरणों को चूमते हुये बोले-'हे गोपीनाथ! आप की लीला मेरी समझ में नहीं आसकती इस लिये दासकी अधिक परीक्षा न लीजिये। हे सच्चिदानंदघन! मैं आप के प्रताप को भली भांति जानता हूं। आप ही ने दुर्योधन की सभा में अनेक रूप धारण किया था और भक्त अर्जुन को विराट् रूप का दर्शन कराया था तो फिर मैं कैसे भूल जाऊं कि, आप हमारे निधिनी के नाथ और प्राणाधार नहीं हो। हे अन्तर्यामी! मुझे यह मालूम था कि मैंने जो प्रतिज्ञा कि है वह भी आप की मर्जी के बिना सफल नहीं होसकती।' भगवान् ने कहा-'हे भक्त शिरोमणि! ज्ञानी मेरे हृदय हैं लेकिन भक्त तो मेरे स्वरूप ही हैं। आप मेरे परम भक्त हैं इसलिये आप की की हुई प्रतिज्ञा को मुझे तोड़ने की सामर्थ्य नहीं है फिर सारा ब्रह्माण्ड और पाण्डवों की क्या गिनती है। मैं तो भक्तों के आधीन हूं, भक्त मेरे आधीन नहीं इस लिये मैं या पाण्डव आप की प्रतिज्ञा कदापि तोड़ नहीं सकते। हे ब्रह्मचारी! आप स्वच्छन्द मृत्यु हैं फिर भला आप को कौन मार सकता है। आप सत्य प्रतिज्ञ हैं इस लिये आपकी प्रतिज्ञा कल अवश्य पूरी

होगी और पृथ्वी अपांडवी होगी इसे कोई भी नहीं टाल सकता। मैं आप के पास यही कहने के लिये आया हूँ कि यदि आप कोई उपाय न करेंगे तो धर्म पर अधर्म की जय होगी और भारतीय इतिहास में कालिमा लग जायेगी। देवी द्रौपदी भी विधवा होजायेगी जिसे आप ने अभी २ अखंड सौभाग्यवती भव' कह कर आशीर्वाद दिया है। मैंने ही द्रौपदी को आप से आशीर्वाद लेने के लिये भेजा था, क्योंकि इसी के द्वारा द्रौपदी का कल्याण होसकता है और पांडव जीवित रह सकते हैं तथा अधर्म पर धर्म विजय पा सकता है। यदि आप अपनी प्रतिज्ञा पर अटल हैं तो मैं आप को विचलित करने की शक्ति नहीं रखता क्योंकि आप हमारे अनन्य भक्त हैं। हम आप एक ही हैं, कोई अन्तर नहीं लेकिन भक्तों का दरजा भगवान् से ऊंचा है इसलिये आप हम से श्रेष्ठ हैं। इसलिये हे गांगेय! बहिन द्रौपदी आप के सामने खड़ी है आप अपनी मृत्यु की युक्ति इसे बतादें तो आप की प्रतिज्ञा भी सच्ची हो और धर्म की विजय भी हो।

भीष्मपितामह थोड़ी देर चुप रहे फिर हाथ जोड़ बोले-'हे अन्तर्यामी! आप घट घट में व्यापक हैं फिर हम से पूछते हैं मृत्यु की युक्ति। यह कितना रहस्यमय है। भला आप से क्या छिपा हुआ है आप तो जानते ही हैं कि शिखंडी के निमित्त से हमारी मृत्यु है जिस समय शिखण्डी सामने रहेगी में युद्ध नहीं कर सकता। भगवान् को तो इतना ही अभीष्ट था। उन्होंने भीष्म पितामह को गले से लगा लिया और कहा-'हे स्वच्छंद मृत्यु! आप जैसे भक्त ही के कारण इस संसार का कार्य चलता है और पृथ्वी ठहरी हुई है। इस समय आपने जो त्याग किया है वह सचमुच विदेह मुक्त ही से होसकता है। आप ने अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर मेरी बात और धर्म की लाज रखी है इस लिये आप धन्य हैं। आप ही जैसे भक्त की शक्ति थी कि मुझे युद्ध में रथ का पहिया ग्रहण करा कर मेरी प्रतिज्ञा झूठी कराई और मुझे आपके आधीन होना पड़ा इसी लिये हे अक्षय आयु! मैं सर्वदा भक्ताधीन ही हूं।' इतना कह भगवान् कृष्ण ने उन्हें छाती से लगा लिया और दोनों एक रूप होगये।

आज युद्ध का दसवां दिन था। भीष्म पितामह ने शिखंडी को सामने देख अस्त्र छोड़ दिये थे। अर्जुन ने अपने बाणों से घायल कर दिया। भीष्म पितामह की प्रतिज्ञा पूरी हुई और अधर्म पर धर्म की विजय हुई। उस समय सूर्य दक्षिणायण थे इसी लिये भीष्म जी शरशय्या पर पड़े रहे और उत्तरायण होते ही इस शरीर को त्याग कर परमात्मा के स्वरूप में लीन होगये।

न कोई पाता तेरा पार।

(लेखक-ब्रह्मविष्णु पाण्डेय, विद्याभूषण "विष्णु")

बनाया है तू ने आकाश, चन्द्र-रवि में भी किया प्रकाश।
दया का है तू ही अवतार, न कोई पाता तेरा पार॥
वायु में भी है तेरी शक्ति, सभी करते हैं तेरी भक्ति।
वेद हैं तुझ को रहे पुकार, न कोई पाता तेरा पार॥
अग्नि को तू ही देता ताप, दूर करता तू ही संताप।
तेरी है महिमा अपरम्पार, न कोई पाता तेरा पार॥
वारि में भी है तेरा ओज, सभी करते हैं तेरी खोज।
विश्व का है तू ही आधार, न कोई पाता तेरा पार॥
लगा कर तू ने ही ये वृक्ष, कला दिखलाई है प्रत्यक्ष।
विलक्षण तेरा कारीगर, न कोई पाता तेरा पार॥

जगत्कर्ता तू ही है ईश ! पालता है तू ही जगदीश।
भास करता है तू संसार, न कोई पाता तेरा पार॥
जरायुज-स्वेदज-अंडजजीव, सभी तुझसे होते संजीव।
'विष्णु' तू निराकार-साकार, नकोई पाता तेरा पार॥
भुलाते कभी तुझे जो नहीं, कष्ट वे लोग न पाते कहीं।
उन्हीं का जीवन है साकार, न कोई पाता तेरा पार॥

भक्त का भोजन

[ले० पं० श्री कृष्ण शर्मा धर्म शिक्षक]

संसार प्रिय मनुष्य नाना प्रकार के पदार्थों से अपने भोजन को प्रिय बनाता है। वह अपनी भोजनशाला को और भोजन-शाला के बर्त्तनों को साफ रखने का प्रयत्न करता रहता है। वह सुन्दर चांदी की थाली में उत्तम मेवा मिठाई रखता है और उत्तम ऊनी आसन पर बैठता है। तब उस भोजन को अपने शरीर को पुष्ट करने के लिए अपने रुधिर मांस को नवीन करने के लिए बड़े चाव और उत्साह से करता है। वह अपने भोजन में स्वाद परिवर्तन के अनेक उपाय करता है, और प्रतिदिन अनेक प्रकार के शाक बनवाता है। और अपने हितकर भोजन का प्रयत्न करता ही रहता है। परन्तु भक्त का भोजन इससे निराला ही होता है। वह प्रातःकाल उठ कर स्नान आदि से निवृत्त होकर अपनी हृदय रूपी थाली को ईश्वर प्रार्थना से, ईश्वर की मूर्ति दर्शन से, मंत्रों के उच्चारण से तथा सत्संग से खूब ही मन लगाकर शुद्ध करता है। और सुपवित्र श्रद्धा रंग से रंगे हुए, विश्वास रूपी आसन को लेकर मन्दिर में दिव्य भोजन करने के लिए जाता है। जिस प्रकार अति भूखा मनुष्य दोपहर को भोजन करने के लिए अपने बगल में आसन और हाथ में थाली लेकर बड़े चाव से भोजन करने के लिए भोजनशाला में दौड़ जाता है इसी प्रकार ईश्वर भक्त भी आध्यात्मिक भोजन को नित्य प्रति चौगुने चाव से और बड़ी श्रद्धा से करता है, फिर उसका अलौकिक परिणाम स्वयं ही उपलब्ध हो जाता है।

बहुत से मनुष्य कहा करते हैं, हम तो दश बारह वर्ष से पुजारी हैं। हम नित्य प्रति लक्ष नाम लेते हैं परन्तु हमको तो नई बात नहीं प्रतीत होती हमारे मन की मलीनता अभी तक दूर हो नहीं होती। और न हमारे जीवन में विशेष परिवर्तन ही होता है। बहुत से पुजारी भी अत्यन्त मलीन मन के होते हैं, उनके हृदय में प्रेम श्रोत तनिक भी प्रवाहित नहीं होता इस ही कारण, अनेक घर बार छोड़ने वाले साधु भी उस सुख से वंचित रहते हैं, इसका कारण यह ही है कि उन्होंने मनरूपी थाली को पवित्र नहीं किया।

जो मनुष्य मनरूपी थाली को सदाचार, सत्य भाषण आदि अनेक साधनों से विशुद्ध कर लेता है उसका यह आध्यात्मिक भोजन लाभकारी होता है। वह इसके पवित्र परिणाम को प्राप्त हो सकता है जो पुरुष फूटी थाली में दाल करवाता है और कच्ची रोटियां खाता है, और दाल में मिट्टी

आदि खाजाता है वह पुष्ट होने के स्थान पर उलटा दिनों दिन निर्बल होता चला जाता है। इसी प्रकार जो पुरुष पवित्र मन से प्रेम पूर्वक भगवत् पूजा नहीं करता है, वह अभिमानी और ढोंगी हो जाता है। वह ईश्वर भक्ति के बहाने और बुराई में फंस जाता है ईश्वर-भक्त मन को श्रद्धासे नित्य प्रति स्नान कराता रहता है, और मन को इतना सात्विक करता है, कि इन स्थूल पदार्थों को भी दशान्तर से आध्यात्मिक भोजन बना लेता है, क्यों कि वह जो कुछ खाता पीता है उस सबको ईश्वर के अर्पण कर देता है। भक्त पुरुष अपने भोजन में तुलसी दल छोड़ देते हैं। और उस भोजन को प्रभु को सौंप देते हैं। एवं अपने पीने के जल में भी तुलसी दल छोड़ देते हैं अर्थात् यह कहते हैं कि हे जगन्नाथ ? यह अन्न जल आपका ही है और आपको ही-समर्पण है। मेरा कोई अहंकार एवं अधिकार नहीं है। मैं केवल आपकी प्राप्ति के लिए इसको स्वीकार करता हूं। कोई २ भक्त तो अपने सांसों-पर भी तुलसी छोड़ देते हैं। वे केवल ईश-दर्शन-लालसा में ही कुछेक सांस लेते रहते हैं। इन भक्तों को सांसारिक विषय भोग खोर लगते हैं। संसारके मनुष्यों से बातें भी करना उचित नहीं समझते, वे तो प्यारे से ही मिलना चाहते हैं उसी दिव्य-मिलन की बाट देखते रहते हैं। वे ऊँचे वृक्ष पर लटके हुए, और वायु के झोंके की परीक्षा करने वाले, पके फल के समान होते हैं। उनका सर्वस्व 'प्यारा' होता है। उसके मिलते ही संसार-वृक्ष को एक दम छोड़ देते हैं। वे फिर इधर आने की स्वप्न में भी इच्छा नहीं करते हैं।

वे भक्त इस संसार को दहकते हुए अंगारों के समान समझते हैं। इसमें से निकलने के लिए इस आध्यात्मिक भोजन को बड़े विचार के साथ करते हैं। वे उस के ऊपर के स्वाद को ही नहीं लेते हैं। वे तो इसकी भीतरी तह में अच्छी तरहघुस जाते हैं। वे तो इसे करते समय विश्वास रूपी आसन पर जम कर बैठ जाते हैं। और सुश्रद्धा रूपी घृत डालकर शुद्धान्तःकरण रूपी थाली में बाह्य जगत को भूल कर इस भगवत्-भजन रूपी भोजन को प्रेम से पाते हैं।

यही है निराला अक्षय सखदाई- भक्त का भोजन।

पूर्त कर्मकी पूर्णता

[ले० पं० किशोरीदास जी बाजपेयी शास्त्री]

"इष्टेन लभते स्वर्गं पूर्तेन मोक्षमाप्नुयात्।"

हमारे देशमें, आजकल एक ऐसे दल का भी आविर्भाव हुआ है, जो 'मोक्ष' के नाम से डरता अथवा घबड़ाता सा है। इस दल की समझ में मोक्ष भी मानों कोई 'हौआ' है, जिसका नाम सुनते ही कान खड़े हो जाते हैं। इन लोगों का प्रादुर्भाव नवीन शिक्षा की अजीब प्रणाली की बदौलत हुआ है। इनका कहना है कि, मोक्षकी खिड़की में बैठ करबहुत दिनों तक हमारे देश ने हवा खाई है, अब हमें इस पुराने बुढोंके पचड़े को छोड़ना चाहिये। इस समय हम लोगों को पुरानी "मोक्ष" की खिचड़ी

पकाना छोड़ कर "देशोद्धार" की अथवा लौकिक उन्नति की खीर चखनी चाहिए। सब देशों की तरह योरप में भी एक देशव्यापी ऐसा दल है, जो परलोक, आदि को न मान कर अथवा उधर से उदासीन रह कर इस लोक की उन्नति और सुख को ही मनुष्य जीवन का चरम पुरुषार्थ मानता और उसी में लगा रहता है तथा बहुत कुछ अपने ध्येय पर पहुंचता है हमारे देश का उक्त दल मानों इसी दल का शिष्य है; परन्तु अपने गुरु-दल की भांति उद्देश्य सिद्धि से सदा वञ्चित रहता है; क्योंकि केवल कहना ही कहना इन्होंने सीखा है और कुछ नहीं।

कहावत है "नयी नाइन और बांस का नहन्ना' हमारे प्रकृत दल पर यह कहावत भला प्रकार उतरती है। ज्यों ही इन्होंने इधर उधर किसी सामयिक पत्र अथवा पुस्तक में लौकिकोन्नति-मुख बात देखी कि, फिर क्या? जहां कहीं कथा-वार्ता में या और कहीं धर्म-चर्चा अथवा परलोक सम्बन्धी बात सुनी कि, बड़बड़ाने लगे-"अरे भाई, अब इन बातों को छोड़ो। लौकिक उन्नति कर के देश का भला करो। इन पुराने पचड़ों में क्या रखा है? इत्यादि।"

संसार में ऐसे जनों का प्रादुर्भाव कोई नयी बात नहीं अतः आश्चर्य्य न करना चाहिए। सब देशों में, और विवृत्ति प्रधान हमारे इस भारत में भी सदा से कुछ ऐसी प्रकृति के जन होते आये हैं और कोई कोई तो हद से ज्यादह आगे बढ़ कर यहां तक कह देने में शर्म करना उचित नहीं समझते कि-"निर्विं मोक्षो हि मोक्षः।" अस्तु। हमें इस बात का उल्लेख इसलिए यहां करना पड़ा कि, ऊपर के वाक्य में "मोक्ष" शब्द आया है। उसे सुन कर ये "देशोद्धारक" बेचारे चमक न जायँ। डरने की कोई बात नहीं है। जिसे तुम जलती हुई, आग समझ रहे हो, वह आग नहीं अमूल्य रत्न है। उसे पहचानो और प्यार करो।

पाठकों ने देखा होगा कि ऐसे लोग मोक्ष, अथवा धर्मके नामसे तो डरते ही हैं; साथही लौकिक उन्नति और देशोद्धार की भी ये लोग कोरी बातें 'ही बातें' करते हैं। काम कुछ इन से हो नहीं सकता। निरे आलसी होते हैं। बस, बातों के लच्छे लेलो। जिस आदमी में परलोक का प्रेम या भय नहीं, जिस में धार्मिक श्रद्धा नहीं, वह इस लोक की उन्नति का अथवा देश के हित का कोई काम कर सकेगा; इस में हमें सन्देह है। अब हम आगे इस बात को जरा और स्पष्ट करेंगे।

संसार में दो मार्ग है-'प्रवृत्ति मार्ग और निवृत्ति मार्ग। प्रवृत्ति मार्ग का उद्देश्य केवल लौकिक उन्नति और निवृत्ति-मार्ग का लौकिकोन्नति पूर्वक पारलौकिकोन्नति है। हमारे शास्त्रों में इन दोनों शब्दों के अर्थ में कुछ भिन्नता है। हमें यहां यही अर्थ समझना चाहिए पहले दल का तो लक्ष्य इस लोक के आराम और सुख हैं। उस की नजर में परलोक वरलोक कुछ नहीं। उनका कहना है:-

"ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनंकुतः?"

ऋण करके भी घी पीना चाहिए। जो शरीर भस्म हो, गया, फिर वह कहां से आ सकता है। विज्ञ जन समझ सकते हैं कि, इन लोगों से परलोक कितनी दूर है।

दूसरा दल कहता है कि, लौकिक उन्नति खूब करो। इस में कोई कोर कसर न रखो। परन्तु परलोक को मत भूलो। उसे सदा याद रखो और

उसे ही अपना अन्तिम लक्ष्य बनाओ। सारांश कि, लौकिक उन्नति करते हुए परलोक सुख की चिन्तना और उद्योग करो। पहले इस लोक के सुख की ओर लगना स्वाभाविक है, अतः इसे ही प्रधान और दूसरे को गौण बनाओ। धीरे-धीरे इस स्थिति में विपर्य्यय होता जायगा। पहले में गौणता और दूसरे में मुख्यता आती जायगी। इसी बात का ध्यान रख कर के मनुष्य के जीवन को चार मुख्य विभागों में बांटा है। जिनका नाम "आश्रम" है।

पच्चीस वर्ष तक प्रथम आश्रम में रह कर मनुष्य ब्रह्मचर्य-व्रत को पालता हुआ विद्याभ्यास करे, जो कि इस लोक और परलोक, दोनों के सुखों की प्राप्ति का मुख्य साधन या द्वार है। फिर प्रौढ हो कर दूसरे आश्रम में जाकर पच्चीस वर्ष तक इस संसार के सुखों का स्वधर्मनिर्वाह पूर्वक भली भांति उपभोग करे। स्मरण रखना चाहिए कि इस आश्रम में इस लोक की उन्नति की प्रधानता और दूसरे की गौणता है। इस के बाद मनुष्य तीसरे आश्रम में प्रविष्ट होगा और उसे "वनस्थ" या "वानप्रस्थ" कहेंगे। इस आश्रम में मनुष्य अपने अभ्यास के द्वारा लौकिक कृत्यों से हटता हुआ क्रमशः दूसरी ओर बढ़ता जायगा और भगवान् के चरणों में मन लगाएगा। चौथे आश्रम में पहुंच कर सर्वतोभावेन उस का मन ब्रह्ममय हो जायगा। इस समय लौकिक वासना का एक कण भी उसके मन में कहीं ढूंढे न मिलेगा। वह आनन्दमय होजायगा।

अब देखना चाहिए कि, एक दल के अनुयायियों ने तो केवल इस संसार के ही आनन्द भोगे। परलोक सुख से वह बिलकुल वञ्चित रहा। परन्तु दूसरे दल के अनुयायी ने अपनी युवावस्था में, पच्चास से पचास वर्ष की आयु तक, लौकिक उन्नति कर के उस का आनन्द भी लिया। और अन्त में शुद्ध अद्वैत परमानन्द को भी प्राप्त हुआ। अब, आप सोचें कि, मीर कौन रहा ?

इसी बात को आप यों समझ सकते हैं। एक आदमी को मथुरा से झांसी जाना है और वहां म्यूनिसिपेलिटी की नयी बनवायी हुई रानी "लक्ष्मी बाई" की मूर्ति के दर्शन कर के आनन्द लेना है। मानों इस का परम लक्ष्य इतना ही है। इसी स्थान से एक दूसरा आदमी बम्बई जाना चाहता है और वहां की प्रसिद्ध "चौपाटी" का आनन्द लूटना चाहता है। मथुरा से बम्बई (जी, आई, पी, रेलवे से) जाते हुए झांसी भी बीच में ही पड़ेगी। जब झांसी बीच में ही पड़ेगी, , तो अगर वह चाहेगा, तो वहां उतर कर उस प्रसिद्ध मूर्ति के दर्शन का आनन्द भी ले लेगा और फिर गाड़ी में बैठ कर बीच में और सब देखता सुनता बम्बई जा उतरेगा और वहां "चौपाटी" में जा समुद्र की अप्रमित तरंगों का आनन्द लूटेगा परन्तु वह बेचारा झांसी उतरने वाला "चौपाटी" के इस आनन्द से बिलकुल कोरा रहेगा। उसका तो अन्तिम ध्येय ही झांसी है; बम्बई है ही नहीं। अगर उसका मित्र कहता है कि चलो आगे बम्बई चलो; वैसा अद्भुत आनन्द दीखेगा–बिना तेल और बत्ती की रोशनी से अपूर्व आनन्द आयेगा; तो ऐसी बातें सुन कर गांव का रहने वाला झांसी जिगमिषु अपने मित्र की बातों पर विश्वास न करके उसकी हंसी उड़ाने का दुःसाहस तक करता है। उस बेचारे ने कभी बिजली की रोशनी या समुद्र का आनन्द देखा ही नहीं; तब वह बिना तेल बत्ती की रोशनी की बात मान कैसे ले ? वह इतना विज्ञानी भी नहीं कि,

इस बात को सोच ले और न उसमें किसी के ऊपर श्रद्धा या विश्वास है जो, उन की बात मानले जो प्रत्यक्ष बम्बई जाकर बिजली की रोशनी और समुद्र की अपूर्व लहरों का आनन्द ले कर आये हैं तब भला बताओ कि बम्बई वह क्यों कर पहुंच सकता है। फलतः वह झांसी रह गया और उसका मित्र झांसी होकर, वहां का आनन्द ले, सीधा बम्बई जा धमका।

अब हमारे पाठक स्वयं सोच लें कि, इन दोनों मार्गों में से कौन सा अत्युत्तम है। उसी का आलम्बन किया जाय। सुतरां सब की समझ में दूसरा (निवृत्ति-मार्ग) ही जंचेगा और उसी की हमारे वेदों और उपनिषदों में धूम है, जिसे योरप के प्रकृति उपासक भी आगे बढ़ कर अब नत शिरस्क हो मानने लगे हैं।

जिस प्रकार मथुरा से बम्बई जाने के दो रास्ते हैं एक तो जी. आई. पी. रेलवे द्वारा झांसी होकर और दूसरा बी. बी. एण्ड. सी. आई. रेलवे से भरत पुर कोटा होकर, ठीक इसी प्रकार मोक्ष के लिए भी दो मार्ग हैं। इन दोनों में से एक को "भागवतधर्म" और दूसरे को "संन्यासधर्म" कह सकते हैं। भागवतधर्म में "पूर्त" आदि कर्मों का उपदेश है और संन्यासधर्म में सब कुछ छोड़ केवल ब्रह्म-चिन्तन की विधि है। इन में से भागवत धर्म को आप जी. आई. पी. रेलवे समझें, जिससे होकर जाने में झांसी की रानी की मूर्ति के दर्शन का आनन्द बीच में मिल जायगा और फिर बम्बई पहुंच जाइयेगा। दूसरे "संन्यास मार्ग" को आप मथुरा से छूट कर सीधी बम्बई जाने वाली बी. बी. एण्ड. सी. आई. की स्पेशल ट्रेन समझें; जो सीधी मथुरा से छूट कर बम्बई जा खटके गी। इस लाइन में झांसी न पड़ेगी। अब आप अपना मार्ग पसन्द करलें।

इतना सब जो मैंने लिखा, उसका तात्पर्य केवल इतने से है कि:-

इष्टेन लभते स्वर्गं पूर्तेन मोक्षमाप्नुयात"

इस वाक्य में जो आया है कि "पूर्त से मोक्ष मिलता है" तो मोक्ष तो हमारा ध्येय है ही। अब देखना यह है कि, पूर्त है क्या चीज! क्या इस से कुछ लौकिक लाभ भी है? अगर है, तब फिर क्या? पौबारह हैं। और फिर चाहिए ही क्या?

अच्छा, तो सुनिये। शास्त्रों में लिखा है कि, श्रौत याग आदि करने को "इष्ट" और देवालय, जलाशय, विद्यालय गोशाला, प्रपाशाला आदि के बनवाने तथा वृक्षादिकों के लगाने को 'पूर्त" कर्म कहते हैं। कहना न होगा कि, परिभाषित पूर्त कर्म से लोक की उन्नति और लाभ किस प्रकार सम्भावित हैं। फिर अन्त में-" पूर्तेन मोक्षमाप्नुयात" यह तो इस का प्रधान फल है ही। लौकिक सुख गौण फल है। एक आदमी बगीचे में अनार के पके फल तोड़ने जाता है। उसका मुख्य ध्येय अनार के पके फल हैं। वही उस का मुख्य फल है। परन्तु जब वह अनार के फल तोड़ने को बगीचे में जाता है, तो तरह तरह के चम्पा और चमेली आदि के सौरभभरित पुष्पों की सुहावनी सुगन्ध द्वारा उसकी नाक मस्त हो जाती है; यही उसका गौण फल हुआ। परन्तु गौण फल भी कितना मधुर है!

जो मनुष्य मार्गों और जंगलों में, या जहां भी जरूरत हो, जलाशय बनवाते हैं, उन के आस-पास सुन्दर-सुन्दर गम्भीर और ठंडी छाया देने वाले वृक्ष लगवाते हैं: उन के लौकिक और पारलौकिक सुख का क्या ही ठिकाना है? गर्मी के दिनों में प्रचण्ड ग्रीष्म

रश्मि भगवान भास्कर की तीक्ष्ण जलती हुई धूप से तड़फते, और बिल-बिलाते निरीह और मूक पशुपक्षी तथा भ्रान्त पथिक जब उन जलाशयों के किनारे के हरे हरे वृक्षों को दूर से देखते हैं, तो उन के शरीर में फिर से मानों प्राणों का सञ्चार हो जाता है। फिर वे वहां पहुंच कर उस शीतल छाया और ठंडे पानी से जो आनन्द पाते हैं, और उन की तृप्त आत्मा जैसा-कुछ आशीर्वाद इनके बनवाने वालों को देती है, वह मन और वाणी से बहुत परे है। कहिये तो फिर अगर ऐसी पवित्र आत्माओं को-योगि-दुर्लभ गति मिले, तो इस में क्या आश्चर्य है।

हम कह चुके हैं कि, देवालय, जलाशय, विद्यालय, औषधालय, प्रपाशाला और गोशाला, आदि पुण्य संस्थाओं के बनवाने को तथा बगीचे लगवाने और मार्गों आदि पर वृक्षों के लगवाने या लगाने को पूर्त-कर्म कहते हैं, जिस की शास्त्रों में इतनी प्रशंसा है। इन कर्मों में से एक को भी करनेवाला अक्षय और अनन्त पुण्य का भागी हो कर अप्रतर्क्य सुख पाता है। इन सब के लिए शास्त्रों में पृथक् २ विधि और उन के फलों का वर्णन है। यहां मैं यदि उस का जिकर छेड़ दूं, तो मजे का यह छोटासा लेख एक बड़ा ग्रन्थ बन जाय। इस लिए और सब के बारे में कुछ न कह कर केवल "तालाब" ही बनाने बनवाने के विषय में हमारे सर्व-मान्य "महाभारत" के "अनुशासन पर्व" के अट्ठावनवें अध्याय में धर्मराज युधिष्ठिर के पूछने पर महाव्रत श्री भीष्म ने जो कुछ कहा है, उस का कुछ अंश यहां देते हैं। भीष्म जी कहते हैं:-

'तडागानां च वक्ष्यामि, कृतानां चाऽपिये गुणाः।
त्रिषु लोकेषु सर्वत्र पूजनीयस्तडागवान्'॥

तालाबों के बनवाने के गुण मैं कहता हूं। तालाब बनाने वाला तीनों लोकों में पूजनीय होता है।

'स कुलं तारयेत् सर्वं यस्य खाते जलाशये।
गावः पिबन्ति सलिलं साधवश्च नराः सदा'॥

जिस के बनाए हुए तालाब में गौऐं, महात्मा और मनुष्य जल पीते हैं, वह अपने कुल सहित सब को तारता है।

'तडागे यस्य गावस्तु पिबन्ति तृषिता जलम्।
मृग-पक्षि-मनुष्याश्च सोऽश्वमेध-फलं लभेत्'॥

जिस के तालाब में प्यासी गौऐं, मृग, पक्षी, और मनुष्य जल पीते हैं, उसे अश्वमेध यज्ञ करने का फल मिलता है।

'सर्वदानैर्गुरुतरं सर्वदानैर्विशिष्यते।
पानीयं नरशार्दूल! तस्माद्दातव्यमेव हि'॥

जल का दान सब दानों से बड़ा और श्रेष्ठ है। इस लिए हे राजेन्द्र! जल-दान अवश्य करना चाहिये।

हमारे भाइयों को ये वाक्य सदा और खास कर गर्मी के दिनों में तो अवश्य स्मरण रखने चाहिए। गर्मी की कड़ी धूप से व्याकुल हो कर प्यास से घबड़ाए हुए जंगल के मृग आदि मूक पशु, और पालतू गौ आदि पशु जब तड़फते हुए इधर उधर भटकते हैं और मारे प्यास के मृतप्राय हो जाते हैं; ऐसी दशा में यदि कहीं भाग्य से किसी पुण्य-कर्मा के बनाए या बनवाए हुए तालाब के पास वे पहुंच गये, तो उस में भरे हुए पानी को देख कर इन निरीह पशुओं के मन किस प्रकार प्रसन्न हो जाते हैं और पानी पीकर उनकी आत्मा उसके बनाने वाले को कैसे कैसे आशीर्वाद देती हैं; इसे सब कोई सहज ही समझ सकते हैं।

जिनसे तालाब आदि नहीं बन सकते, वे थोड़े

ही व्यय और परिश्रम से मार्गों तथा जंगलों में पशुओं के पीने के लिए छोटी छोटी प्याऊ और एक-एक कुआं उनके पास बनवा सकते हैं। कुआं से पथिक तथा इतर मनुष्य जल पियेंगे और गर्मी के दिनों में सायं प्रातः उस प्याऊ को उस कुएं से भरवा देने से पशुओं को अपार आनन्द मिलेगा। जिनकी इतनी भी सामर्थ्य नहीं है, वे भी कुछ न कुछ तो कर ही सकते हैं। एक आध प्यासे पथिक को या पशु को भर कर पानी अवश्य ही हर एक मनुष्य पिला सकता है। अपने अपने घरों के द्वार पर या आंगन में मिट्टी के शरावे आदि को रस्सी से बांध कर किसी वृक्ष या खूंटी आदि में टांग देना चाहिए। संध्या सवेरे और दुपहर को इस मिट्टी के शरावे में एक एक लोटा पानी छोड़ देना चाहिए। इसमें हजारों तृषित पक्षी पानी पी, पी, कर अनन्त आशीर्वाद देंगे। परन्तु आज कल लोग कह देते हैं—"वह इस खट खट में कौन पड़े।

महाभारत में लिखा है:-

"पानीयस्य प्रदानेन प्रीतिर्भवति शाश्वती।
तिलान् ददत पानीयं दीपान् ददत जाग्रत॥
ज्ञातिभिः सह मोदध्वमेतत्प्रेत्य सुदुर्लभम्।"

जल दान से सदा रहनेवाली प्रीति होती है। तिलों का दान करो, पानी का दान करो दीप (रोशनी) का दान करो और अपने जाति भाइयों के साथ आनन्द करो। यह सब स्वर्ग में भी दुर्लभ है।

मोहन

[ले० श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी आश्रम]

दरश दो मोहन बंशी वारे ॥टेक॥
मोहन रूप सुहावन सुन्दर तीन लोक के प्यारे ॥१॥
मोहनि चितवन श्याम बिहारी मोहन दृग के तारे ॥२
मोहनि अधर विराजत मुरली मोहन राग उचारे ॥३॥
मोहन मुकुट लसत सिर ऊपर मुखद्युति चन्द्र उजारे ॥४॥
मोहन नन्द यशुमति मोहनि मोहन नन्द दुलारे ॥५॥
मोहन मोहन प्रभु बस मोहन मोहन पार उतारे ॥६

सब प्रकार की संपत्तियों का मूलाधार।

[ले० श्री गङ्गाप्रसाद जी अग्निहोत्री]

गावो लक्ष्म्याः सदामूलम् गोषु दत्तं न नश्यति ॥ (महाभारत)

आज दिन भारत में जो थोड़े से भारतवासी कोयले की खदान मैंगनीज की खदान सूत के कपड़े और गल्ले की दूकान, मिल और फैक्टरी आदि का व्यवसाय, वकालत, बैरिस्टरी सरकारी नौकरी, ब्याज बट्टे का रोजगार आदि करके मनमाना धन कमा रहे हैं। वे क्या कभी क्षण भर के लिये भी इस बात का विचार करते हैं कि जिन जिन व्यवसायों को करके वे धनवान् बने हैं वा बन रहे हैं उन सब व्यवसायों द्वारा जो धन मिल रहा है उसका आदिकारण कौन है और उस आदि कारण पर आज दिन कैसी विपत्ति बीत रही है? उस विपत्ति के प्रबल प्रवाह में उनके धनागम का मुख्य कारण यदि बह जायगा तो वे फिर किसकी सहायता से धन कमावेंगे और धनवान् बनेंगे? कहना नहीं होगा कि इस समय जो भारतवासी उक्त और अन्यान्य व्यवसायों द्वारा धन कमा रहे हैं उन सब व्यवसायों का आदिकारण भारतीय गो वंश ही है। गो वंश जिस प्रकार आज कल नष्ट किया जा रहा है उसका ज्ञान बहुत ही थोड़े लोगों को है। जिन थोड़े लोगों

को इसका नाम मात्र का ज्ञान है, उनमें अज्ञान जन्य कृपणता इतनी भरी हुई है कि वे गोवंश के उपकार को स्वीकृत ही नहीं करते। वे जानते हैं कि गो वंश के उपकारों को स्वीकृत करने से गोरक्षा के निमित्त कुछ उन्हें देना ही पड़ेगा। इस भय से वे गो वंश के उपकारों को स्वीकृत ही नहीं करते।

जो लोग कोयले की खदान आदि में काम करते हैं, वा जो लोग सरकारी नौकरी तथा वकालात आदि का काम करते हैं, उन्हें वे काम करने की शक्ति और बुद्धि तभी प्राप्त होती है। जब वे गो वंश द्वारा उत्पन्न किये हुए गेहूं चावल आदि भोज्यान्नों तथा दूध घी आदि से बनाये हुए नाना प्रकार के भोजन खालेते हैं। उसी प्रकार जो लोग जमींदारी किसानी सूत के कपड़ा और मिल तथा लेन देन आदि का रोजगार करते हैं उन्हें वे चीजें गो वंश की सहायता से ही मिलती हैं। उनके धनागम का गो वंशसे बहुत निकट और घना संबंध होने पर भी वे लोग न तो गो वंश की वर्तमान दुर्दशा को समझने की ही चिंता करते हैं और न उन विपत्तियों को दूर करने की व्यक्ति गत रूप से वा सामूहिक रूप से चेष्टा ही करते हैं। अपने धन तथा उसे प्राप्त करने की आदि शक्ति की उपेक्षा करने वाले लोग भारत के बाहर क्वचित् ही होंगे। जो जमींदार लोग गोवंश की उपेक्षा कर कौन्सिलों की सेवा में धन खर्च किया करते हैं उनका यह काम गोस्वामी तुलसीदास जी के मार्मिक शब्दों में दूध के लिये काम धेनुको छोड़ कर आकके सेवन के समान ही है।

अब से जो हुआ सो हुआ। पर अब आगे भी भारत के धनवान और विद्वान् समस्त प्रकार की संपत्तियों की आदि माता गो के वंश को नष्ट होने देंगे तो उन्हें समझ रखना चाहिये कि उन लोगों को संसार में रहने के लिये कहीं स्थान नहीं रहेगा। शाह मृग नाम का पशु जिस प्रकार किसी झाड़ी में अपने मुँह को छिपा कर यह मान लेता है कि अब उसे मारने वाला उसका कुछ नहीं कर सकता। पर व्याधा पीछे से आकर उसे बहुत सुगमता से मार लेता है। वही दशा इस समय भारत के धनवानों और विद्वानों की हो रही है। लाख का रोजगार करने वाला कहता है कि मेरे रोजगार से और गोधन से कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है अतः मैं गोरक्षा में धन लगाने के लिये बाध्य नहीं हूं। इसी प्रकार कोयले की खदान वाले और वकील बैरिस्टर तथा सरकारी नौकर आदि कहा करते हैं। पर वे जानने पर भी इस बात को स्वीकृत नहीं करते कि उनके जीवनाधार भोज्यान्न गो वंश की सहायता से ही उपन्न होते हैं अतः वे गोवंश के अत्यधिक ऋणी हैं। भारतीय धनवानों तथा विद्वानों की यह कृतघ्नता समूचे भारत को अवनति के समुद्र की ओर खींचे लेजा रही है। पर वे भूल कर भी इस अनिष्ट की ओर दृष्टिपात नहीं करते!!!

महात्मा गांधी ने साबरमती में एक आश्रम खोल रखा है। सुनते हैं इस आश्रम के बनाने में धनवानों ने कई लाख रुपया लगाये हैं और कई हजार रुपया वे इसके मासिक खर्च में लगाते रहते हैं। इस आश्रम में जिनको विश्व बन्धुत्व की शिक्षा दी जाती है, उन्हें प्रति दिन सात्विक भोजनों के साथ बीस तोले गौका दूध भी दिया जाता है। कहना नहीं होगा कि यहां जो लोग विश्वबंधुत्व की शिक्षा पाते हैं और उसमें दक्ष होकर बाहर निकलते हैं उस शिक्षा के पोषक और रक्षक सात्विक भोज्यान्न और गो

का दूध ही है। इस सत्य की घोर अवज्ञा कर उक्त आश्रम के धन दाता सहायक और विश्व बन्धु लोग चर्खे और खद्दर के प्रचार पर ही जोर देते हैं। उनकी समझ में यह छोटी बात नहीं आती कि जिन सात्विक भोज्यान्नों तथा गौके दूध के प्रभाव से वे स्वयं विश्व बन्धुत्व को धारण कर सके है। उन्हें जब भारत की जनता भरपेट पासकेगी तभी वह सच्चे हृदय से चर्खे और खद्दर की भक्त बनेगी। चाहिये तो यह कि वे लोग चर्खे और खद्दर के प्रचार के साथ ही साथ गोसाहित्य के प्रचार द्वारा गोपरिपालन की शिक्षा का प्रचार भी करते जांय, परं अत्यन्त खेद की बात है कि इस आवश्यक विषय की ओर न तो महात्मा गांधी का ही ध्यान यथेष्ट मात्रा में जाता है और न उनके सेठ जमनालाल आदि पद शिष्यों का ही।

अन्त में भारत के सभी धनी मानी और नेताओं से इस जन की यह विनीत प्रार्थना है कि इस समय जितनी प्रकार की संपत्तियां भारत का निर्वाह कर रही है उन सब की आदि जननी अकेली गौ ही है। उस पर चिरकाल के अज्ञान से यह बड़ी विपत्ति आपड़ी है। उसके वंश का क्षय बहुत बड़ी मात्रा में तीव्रगति से किया जा रहा है। उसका क्षय नहीं रोका जायगा तो भारत की सब प्रकार की संपत्तियों का प्रवाह रुक जायगा। इस सामूहिक अनिष्ट को दूर करना प्रत्येक समझदार भारतवासी का काम है। इस दोष को दूर करने का एक मात्र उपाय गोसाहित्य के प्रचार द्वारा गोपरिपालन की शिक्षा की प्रचार ही है। कृपणता वश गोसाहित्य के प्रचार की उपेक्षा करना आत्मघात के समान है और गोसाहित्य का प्रचार आत्मरक्षा का अमोघ उपाय है।

काम से राम अत्यन्त दूर है

गतांक से।

इधर फरफंदी किसी से लड़ाई न होने के कारण से सुस्त थी क्योंकि लड़ाई किये बिना वह मुख भी न धोती थी अब सारा दिन होगया यह देख आभास सिंह फरफंदी को समझाने लगे और कहा कि मेरी निरंकुशी नाम की दूसरी स्त्री है वह तुम्हारी खूब हिफाज़त करेगी वह बहुत सुशीला है तुम सुस्त न होओ आनन्द से रहो कोई प्रकार का दुःख न उठाना तुम्हारी रुचि अनुसार सब काम होगा तुम तो हमारी प्राण प्रिया हो। इतना सुनते ही वह घूंघट खोल कहने लगी क्या दूसरी स्त्री लिये बैठा है तो मेरे साथ विवाह क्यों किया वह मेरी बराबरी करेगी।

आ:-बराबरी कैसे करेगी तुम्हारी आज्ञानुसार ही चलेगी और अति सुशील है मेरे पास बहुत दिवस होगए हैं मैंने उसका कोई अनुचित व्यवहार नहीं देखा बड़ी योग्य है।

फ०-बस २ चुप रह ज़ादा तारीफ न कर अगर उसको रखना था तो मुझे क्यों व्याह लाया जहां मैं रहूंगी वहां वह न रहने पावेगी।

आ०-अच्छा मकान के अलग हिस्से में ही रहेगी।

फ०-बहुत बातें न बना यदि मुझे रखना चाहता है तो अभी २ घर से निकाल जहां मैं रहूंगी वहां वह कैसे रख सकती है अभी निकाल, नहीं मानेगा तो मैं अपने प्राण घात करती हूं।

आ०-अभी रात का समय है बिचारी कहां जावेगी वह तो घर से बाहर तक नहीं निकली है गली कूचों का रास्ता भी नहीं जानती।

इतना सुन फरफन्दी चीख मारकर रोने लगी व सिर पीटने लगी यह दृष्य देख आभास सिंह घबड़ाया और मन में विचार करने लगा कि क्या करना चाहिये निकाल देना ही ठीक है यहविचार कर कहने लगा कि जैसी तुम्हारी राय होगी वही करेंगे।

फ०-बिचारी तेरे को मालुम होती है जा जा अभी घर से बाहर कर।

आभास सिंह बहुत अच्छा कह चल दिया फरफंदी भी साथ ही साथ आई और निरकुंशी से बात भी न होने दी निरकुंशी घर से बाहर निकाल दी गई वह पति की आज्ञा पाकर घर से बाहर जाकर एक वृक्ष के नीचे बैठ गई रात्रि का समय था एक कपोत एक कपोतनी दोनों वृक्ष पर बैठे बातें कर रहे थे कपोतनी बोली, कि जो मेरे को भक्षण करेगा वह जब हंसेगा तब उसके मुंह से एक लाल निकलेगा इतना सुन कपोत बोला, कि जो कोई मेरे को भक्षण करेगा उसके एक ऐसा वीर पुत्र उत्पन्न होगा जो अपने कुल भर का उद्धार करेगा यह बात निरंकुशी ने भी सुनी कपोत कपोतनी सुबह होते ही अपने चुगने चल दिये जब शाम को आए स्त्री को वहीं बैठे देखा और आपस में विचारा कि हमको धिक्कार है हम नाम मात्र के ढोंगी ग्रहस्थ हैं। जो एक अतिथि का भी सत्कार न कर सके। इतना कह कर लकड़ी बीन अग्नि प्रकट की और झट कपोत कूद पड़ा यह देख कपोतनी भी कूद पड़ी और दोनों भुन गए निरंकुशी सब वृत्तान्त देख रही थी दोनों अग्नि से निकाल कर खागई अब क्या था खाते ही पेट भर जाने से डकार आई और विचार करने लगी कि दैव गति बलवान् है धैर्य शान्ति धारण कर वहीं अपना आंचल बिछा कर लेट गई यह नियम है कि पेट भर जाने पर बड़ी दूर की सूझती है। लोक में प्रसिद्ध है कि "भूख लगी तब तंदूर की सूझी, पेट भरा तब दूर की सूझी" वह कपोत कपोतनी को धन्यवाद देने लगी और फरफन्दी की बात स्मरण कर हंसने लगी तुरन्त एक लाल मुख से टपक पड़ा तब तो पुत्र का भी निश्चय हुआ। बानगी (नमूना) से गठरी बोरे का पता लग जाता है। बोरे गठरी के नम्बर से कुछ सरोकार नहीं निकलता न मानना भी चाहिये जब तक परखी लगा के न देखे। चतुर व्यवहारी मनुष्य ऐसा ही करते हैं बोरा नया सुन्दर हो नम्बर भी अच्छी रोशनाई के पड़े हों विश्वास नहीं करते परखी घुसेड़ कर वस्तु की जांच कर के खरीदते हैं। इसी तरह लोक में भी प्रसिद्ध है कि "पूत के पांव पालने में ही दीखे हैं, लाड़ परोसा बैंगन आए समाचार ब्याह के पाए" इसी तरह निरंकुशी ने भी निश्चित किया दैव वशात् एक कुम्हार उधर आ निकला और पुत्री मान कर अपने घर लेगया कुछ काल बाद पुत्र उत्पन्न हुआ उस का नाम संस्करण हुआ तो उसका नाम बोधसिंह रखा गया बोधसिंह स्वभाव से ही चेष्टावान मालूम होता था कुम्हार भी बड़ा प्रेम करता था। थोड़े ही दिनों में पढ़ लिख कर तैयार होगया एक दिन लड़कों के साथ खेल रहा था किसी लड़के ने कहा कि तू तो रहतुआ है तेरी जाती का भी तो ठीक नहीं है न तेरे बाप का पता है हम सब लोग तो अपनी जाति और पिता को जानते हैं तू भी बता तब तो बोधसिंह चुप होकर खेल छोड़ अपनी माता के पास पहुंचा और अपनी जाति और पिता का नाम पूंछने लगा तब तो माता ने बहुत कुछ समझाया पर बालहठ तो प्रसिद्ध है अन्न पानी छोड़ पड़ रहा। तब

पुत्र को शोकातुर देख माता ने सब वृत्तान्त कह सुनाया। तब तो बड़े हर्षको प्राप्त हो माता से आज्ञा मांग कर पिता के पास जाने का निश्चय किया। पाठको अब इधर आभाससिंह का क्या हाल हुआ सो सुनाते हैं ध्यान देकर सुनिये।

आभाससिंह-जो अब तो निरंकुशी को निकाल दिया अब हम तुम सुख चैन से रहेंगे।

फरफंदी-(मन ही मन में) अब तो गुलाम बना कर छोड़ूंगी। आभाससिंह नेह रूपी नाथ से नथा हुआ बैल की तरह पिटने लगा। कुछ काल बाद हंहंसिंह पुत्र उत्पन्न हुआ और इससे पश्चात् मन्नूसिंह हुआ। दोनों ही यथा नाम तथा गुण वाले पिता की आज्ञा से विरुद्ध चलने वाले माता के आज्ञाकारी हुए। फिर इनकी सन्तान भी मोही सिंह, लोभी सिंह, दामी सिंह, क्रूर सिंह, छल बिहारी सिंह, चाम सिंह, हन्नू सिंह, मान सिंह, बखील सिंह, दुखी चन्द सुखी चन्द इत्यादि बहुत हुई एक एक के अनेक "एक लख पूत सवा लख नाती" सो लख शब्द भी असंख्य वाची जानना चाहिये लेखनी लिखने को समर्थ नहीं है जिह्वा कथन करने को समर्थ नहीं है। बस आभास सिंह की तो बूझ ही नहीं जब कभी आभास सिंह कुछ चेष्टा करें तो फरफंदी डाइन की तरह खाने को दौड़े यहां तक हुआ कि आभाससिंह है ही नहीं सन्तान ने अपना दखल जमा लिया। आभाससिंह विचार करने लगा कि क्या करना चाहिये बड़ी दुर्दशा हुई और निरंकुशी की याद आई (भाई दुखमें सब कोई ही सुमरता है) और मिलने की तीव्र इच्छा हुई इसी विचार में मग्न था कि (श्मशानांते पुरांतते भोजनांते और मैथुन के अन्त में जो मति होती है वही मति सर्वदा रहे तो नर ही नारायण है) बोधसिंह आ पहुंचा और वार्तालापन द्वारा एक दूसरे का परिचय प्राप्त होगया। कुछ काल बोधसिंह चुप रह कर पिता की हालत देख कहने लगा कि पिता जी मुझे आज्ञा दीजिये आपकी अनुकंपा हो जाय तो इन सब को परास्त करूं आभास सिंह कहने लगा भाई मेरी ही सन्तान है मैं कैसे कह सकता हूं। बोधसिंह पिता की आसक्ति से राजी नहीं हुआ इधर फरफंदी को भी समाचार मिला तो फरफंदी ने अपनी सन्तान इकट्ठी करके कमेटी की और कमेटी में पास होगया कि बोधसिंह का सिर रात में सोते समय काट डालिये और आभास सिंह के जुम्मे लगा दीजिये, क्योंकि इसने हमारी बिना सलाह के इसको क्यों रखा और निरंकुशी की भी खोज करना चाहिये जहां पावे वहीं जान से मार डालना चाहिये। इधर बोधसिंह तो भग खाने वाला था ही नहीं उसको भी पता लगा और फरफंदी के पास सीधा पहुंचा बातों में रार बढ़ गई फिर क्या था घोर युद्ध होने लगा तो बोधसिंह ने सब को मार दिया। तब तो फरफंदी ने बड़ी माया चलाई पर बोधसिंह ने सब को काट दिया और फरफंदी को भी जान से मार दिया तब तो फरफंदी के पिता ने सुना और बड़े समारोह से चढ़ाई की परन्तु बोध सिंह ने सब को परास्त किया सबका क्रिया कर्म यानी पिंड दानादि एकदशा द्वादशादि विधि पूर्वक कर त्रिवेणी में जाकर तिलांजलि दी और सब की गति करके फिर पिता के पास आया और पिता से प्रार्थना की कि आपकी आज्ञा पाऊं तो माता (निरंकुशी) को ले आऊं आज्ञा पाकर कुम्हार के घर पहुंचा और सविनय दंडवत् कर बैठ गया और सब वृत्तान्त कहा तब तो कुम्हार अति प्रसन्न होकर बोला कि बेटा बीरों

का यही काम है धन्य है बोध सिंह तुमको। तूने कुल का भी उद्धार किया। बोध सिंह नम्रता पूर्वक बोला यदि आपकी इच्छा हो तो पिता जी माता जी से मिलने की तीव्र जिज्ञासा कर रहे हैं। जैसी आपकी आज्ञा। यह सुन कुम्हार बोला कि बेटा तू आभास सिंह का साथ न छोड़ना (फिर याद करके) हां तैने तो सबको फरफंदी के पिता अज्ञान सिंह को भी मार दिया है, बेधड़ निरकुशी को लेजा। अब किसी तरह का संशय नहीं है। बोध सिंह आज्ञा पा माता को अपने पिता के पास ले गया और आभास सिंह बोध सिंह और निरंकुशी अमरपुर में आनन्द से निवास कर रहे हैं जो देखना चाहे और सच्चे मन से खोज करे तो देख सकता है बहुत परिश्रम की भी जरूरत नहीं है। जैसी इनकी दशा बदली ऐसे ईश्वर सब के दिन फेरे।

(अपूर्ण)

[ले० श्री स्वामी आत्मानन्द जी]

भगवत् स्तुति

स्वर्ग वासी मुन्शी बनवारी लाल 'शोला' ने वृन्दावन बिहारी श्याम सुन्दर भगवान् कृष्ण की ब्रज लीला का वर्णन जिस सुन्दरता और प्रेमोन्मत्तता से उर्दू कविता में किया है वह ऐसा मनोहर है कि कठोर से कठोर हृदय वाला मनुष्य भी उसे एकबार ही पढ़ने से द्रवीभूत हो जाता है और जिन्हें भगवान् की कृपा से कुछ भी उन गोपी वल्लभ नट नागर से प्रीति है उनके लिये तो वह कविता अपूर्व आनन्द के देने वाली है। आंखों से प्रेमाश्रुओं की झड़ी बन्ध जाती है चित्त भगवान् के चरणों में तन्मय हो जाता है। यह महाशय भी अन्य उर्दु कवियों की तरह प्राकृतिक प्रेम पर ही कविता किया करते थे कविसम्मेलनों में प्रायः शामिल होते थे और वहां माशूका से हिज्रो वस्ल तथा गुलो बुलबुल की चहचहाट में ही मस्त होकर अपनी कविता का चमत्कार दिखा कर वाह २ लूटते थे। सौभाग्य वश भगवत्कृपा से हृदय का दृष्टि कोण बदला और भगवान् के गुणानुवाद गान करने की ओर रुचि बढ़ी और प्रेम विह्वल हो ऐसी अद्भुत कवितायें रचते थे कि सुनने वालों के हृदय भगवत् प्रेम से भरपूर हो जाते थे। उन्होंने भगवान् श्री कृष्ण की ब्रज लीला का वर्णन "ब्रजछवि" नाम की पुस्तक में किया है प्रेमी सज्जनों को इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये वरन नित्य पाठ करना योग्य है जिन महाशयों को उर्दु भाषा से परिचय नहीं है उनके हितार्थ कभी २ "भक्ति" में उस कविता का अनुवाद हिन्दी में करता रहूंगा। इसी हेतु इस मास "ब्रज छवि" की प्रारंभिक भगवत् स्तुति का रसास्वादन पाठकों को कराता हूं।

श्री जगदीश वृन्दावन बिहारी।
श्री राधा रमण माधव मुरारी॥ १॥
श्री गोविन्द राधा कृष्ण गोपाल।
मदनमोहन श्री घनश्याम नन्दलाल॥ २॥
श्री मुरली मनोहर श्यामसुन्दर।
श्री भगवान गोपीनाथ गिरिधर॥ ३॥
श्री यदुपति श्री बांके बिहारी।
चतुर्भुज श्याम मूरत चक्रधारी॥ ४॥

श्री जगदात्मा माधो विधाता ।
दयालु दीन बन्धु प्राण दाता ॥ ५ ॥
मुकुटधारी मदनगोपाल मोहन ।
नवल सुन्दर छबीले लाल मोहन ॥ ६ ॥
कन्हैया नन्द नन्दन नन्द प्यारे ।
दिलारामे जहां जसुधा दुलारे ॥ ७ ॥

इन की व्याख्या वा अनुवाद करने की आवश्यकता नहीं अर्थ स्पष्ट है ।

तुही है हुस्ने रुखसारे हकीकत ।
तुही है परदा बरदारे हकीकत ॥ ८ ॥

प्रकृति की सृष्टि का सौन्दर्य तू ही है प्रकृति की आड़ में छिपा हुवा परदा उठा कर भक्तों को अपनी मनोहर छवि दिखाने वाला भी तू ही है ।

तूही है काशिफे इसरारे अजली ।
तु हो है रूनुमाये हुस्ने अबदी ॥ ९ ॥

दृश्यमान जगत के भेद को खोलने वाला भी तुही है और अपना मुखारविन्द की झलक दिखाने वाला भी तुहा है ।

तुही है जलवा फरमाए दो आलम ।
तुही है खुद तमाशाए दो आलम ॥ १० ॥

इस लोक और परलोक में तुही भरपूर है और तु ही इस संसार का खेल है ।

तूही लौहे तलिस्मे जानो तन है ।
तु हा बख्शिन्दए रूहो बदन है ॥ ११ ॥

जीव जगत वा प्राण प्रकृति के जादु का अधिष्ठान भी तुही है देह और जीवन के देने वाला भी तुही है ।

तुही बहशत फिज़ाए इश्के रुसवा ।
तुही नक्शो निगारे हुस्ने जेबा ॥ १२ ॥

प्रेमोन्माद का बढ़ाने वाला भी तुही है और अप्राकृत सौन्दर्य भी तु ही है अर्थात् अपने भक्तों को अपना अनुपम रूप दिखा कर मस्त करने वाला भी तु ही है ।

तुही है मूजिदे ईजादे कौनन ।
तुही है बानीए बुनयादे कौनेन ॥ १३ ॥

तुही जगत का स्रष्टा है और तुही ब्रह्मांड का आधार है ।

तुही है इश्के अजली हुस्ने जावीद ।
तु ही है खिलवते दिल बजमे तौहीद ॥ १४ ॥

इस अनन्त सौन्दर्य पर मुग्ध होने वाला भी तुही है हृदय में अद्वैतानन्द के अनुभव करने वाला भा तुही है ।

तुही है रौनके गरमीए बाज़ार ।
तुही खुद जिन्स तूही खुद खरीदार ॥ १५ ॥

सृष्टि के बाजार की रौनक भी तुही है और तूही स्वयं जिन्स है और तूही खरीदने वाला है ।

तूही है नगमए बुलबुल चमन में ।
तूही गुंचा तूही है गुल चमन में ॥ १६ ॥

बुल बुल की मनोहर चहचहाट भी तुही है फूल की कली भी तू और फल फूल भी तूही है ।

तूही पखाना तूही शमए महफिल ।
तूही गुल बुन तूही शोरे अनादिल ॥ १७ ॥

ज्योति पर जलने वाला कीट भी तू और दीपक भी स्वयं तू है फूलों का बगीचा भी तू और कोयल की कू कू ध्वनि भा तूही है ।

तू ही लछमन तूही सीता तूही राम ।
तूही गोपी तूही राधा तुही श्याम ॥ १८ ॥

अर्थ स्पष्ट है ।

जमीनो चर्खो मेहरो माह तेरे ।
दो आलम हैं तमाशागाह तेरे ॥ १९ ॥

पृथ्वी आकाश सूर्य चन्द्र सब तेरे हैं समस्त ब्रह्मांड तेरा ही लीला स्थान है।

फ़ना तर्जे ख़रामे नाज़ की आन।
बक़ा इक लब की तेरे मन्द मुस्कान ॥ २० ॥

तेरी अटखेलियां ही प्रलय है और तेरा मन्द मुस्कान ही सृष्टि है।

बुते चितचोर माखन के लुटेरे।
हयातो मौत दोनों खेल तेरे ॥ २१ ॥

हे चितचोर माखन चुराने वाले प्यारे जन्म मरण तेरा ही खेल है।

मिलाये तूने हस्तो नेस्त बाहम।
घिरौंदा तेरा बाज़ीगाहे आलम ॥ २२ ॥

जगत की सृष्टि और प्रलय तेरा एक खेल है जैसे बालक मृत्तिका से खेलता हुआ नाना भांति गृहादि नाना रूप उसके बनाकर फिर बिगाड़ देता है केवल बिनोद मात्र ही उसका खेल है, इसी प्रकार भगवन्! तू भी इस जगत् की सृष्टि प्रलय से क्रीड़ा कर रहा है।

ज़बाने सबज़ा नातिक है सना में।
कि है सरगर्म हर ज़र्रा हवा में ॥ २३ ॥

सब फूल पत्तियां तेरी महिमा का गान कर रही हैं प्रकृति के प्रत्येक परमाणु तेरी ही सत्ता से शक्ति प्राप्त कर कार्य कर रहे हैं।

नमूदे आफ़रीनश है तुझी से।
वजूदे आफ़रीनश है तुझी से ॥ २४ ॥

सृष्टि का निमित्त कारण भी तूही है और उपादान कारण भी तू।

तूही ख़ल्लाक है कौनो मकांका।
तूही रज़्ज़ाक है हर जन्सो जांका ॥ २५ ॥

तूही समस्त ब्रह्मांड का स्रष्टा है और तूही प्रत्येक जीविमात्र का पालन पोषण करने वाला है।

अलग कब तुझ से तेरी गुफ़्तगू है।
ग़रज़ एक तूही तू है तूही तू है ॥ २६ ॥

तेरी सत्ता से पृथक् कोई वस्तु नहीं है सारांश यह कि तेरे सिवा दूसरा भी नहीं है तू ही है तूही है।

तुही है सब से बरतर सब से बाला।
तूही है हाले असयां सुन्ने वाला ॥ २७ ॥

महान् से महान् तू है पतितों की पुकार सुनने वाला तूही है।

अधम बिगड़े हुवे लाखों सवारे।
मेरी भी टेर सुन ले प्राणप्यारे ॥ २८ ॥

अर्थ स्पष्ट है।

शहंशाहे जहां आलम पनाहे।
बराये ख़ुद सुवे 'शोला' निगाहे ॥ २९ ॥

हे जगत के आधार प्रभु ? इस अकिंचन "शोला" की ओर भी कृपा दृष्टि कर क्योंकि मैं भी तो तेरा ही हूं।

पतित पावन राम

[ले० श्री गोविन्दराम अग्रवाल]

मन भज पतित पावन राम

सदन शोभा चारु आनन सुभग सुन्दर श्याम।
केश कुंचित कमल लोचन बदन सुषमा धाम॥
अंक भृकुटी चपल चितवन हृदय को विश्राम।
चरण कोमल बाहु दीरघ ललित धनुही धाम॥
बाल छबि मन हरण प्यारी देखि मोह्यो काम।
ध्यान धरु 'गोविन्द' निशि दिन रटहु रघुवर नाम॥

सुखमय जीवन

दुःखवाद ।

गतांक से आगे

[ले० श्री पं० सनत्कुमार जी 'निर्मल']

साधु कानुकता मक्ता शान्तस्वान्तैर्मोन्मुखैः ।
सारङ्गलोचनां सारान्विंं प्रेयामिलिप्सुभिः ॥

इतना ही नहीं इसका अनुमोदन इन शब्दों में करते हुए, एक हज़रत ने अपनी भी छाप लगादी ।

कब हक़ परस्त जाहिद जन्नत परस्त है ।
हूरोंपे मररहा है यह शहवत परस्त है ॥

'जो मीमांसक स्वर्ग का उपासक है वह सत्य का उपासक कैसे समझा जाय' वह तो तद्देशीय अप्सरादिभोग्य पदार्थों का उपासक कहा जाना चाहिये क्योंकि वहां इनके अतिरिक्त और है ही क्या? धत्तेरे की! यदि ऐसा है तो आपका स्वर्ग हमें न चाहिये हम तो सुख की आकांक्षा से स्वर्ग जाना चाहते थे परन्तु जहां भोग हैं वहां सुख कहां? महाभारत में एक ऐसी ही कथा आती है कि:-

एक समय महर्षि मुद्गलने अत्युत्कृष्ट तप किया और उन्हें स्वर्ग लेजाने के लिये वहां से दिव्य विमान उनके आश्रम में आकर उपस्थित हुआ। विमानाधिपने ऋषिवर से कहा:-"ब्रह्मर्षे! देवेन्द्र सहित अखिल अमरावती एवं ब्रह्मर्षि समूह आपके शुभागमन की प्रतीक्षा में हैं। कृपया आप शीघ्र ही विमान को सुशोभित कीजिये और उन लोगों की दर्शन पिपासा को शान्त कर कृतकृत्य कीजिये।" मुद्गलाचार्य ने कहा "विबुधश्रेष्ठ! मैं आप से एक छोटी सी बात पूछना चाहता हूं; अनुकम्पया कहिये स्वर्ग में क्या गुण हैं जिनके कारण संसार उसकी महदाकांक्षा करता है। और हां यदि उसमें कोई दोष हो तो उस का भी वर्णन करने का श्रम कीजिये।" विबुधवरने कहा "स्वर्ग के गुण! अजी स्वर्ग के गुणों का कोई वर्णन कर सकता है, मुने! वहां नन्दनादि विचित्रोद्यान, सर्वदा, फलों से विभूषित, अनुपमेय सौरभान्वित कुसुमस्तबक विमण्डित तरु पंक्तियों से दर्शकों के मन को मुग्ध किया करते हैं। विलक्षण रत्नावली खचित, दिव्याङ्गनाओं से अलंकृत दिव्य विमान कामगति से विचरते फिरते हैं। उन रम्य हर्म्यों की शोभा का क्या वर्णन करूं जो अरुण वर्ण के रत्नों से विभूषित निवासियों को सर्वदा एवं सर्वथा अनुकूल हैं। जिनमें चन्द्र चन्द्रिकानिभ शुभ्र शय्या, शयनाकांक्षी व्यक्तियों को मानो निद्रादेवी की सुषमा गोद में मोदभरी लोरियां गाकर सुला देती हैं।

कहां तक कहूं वहां भोग्य पदार्थों की संख्या, संख्या की चरम, परार्ध संख्या का भी अतिक्रमण कर गई। आप यह न समझें कि वहां भोग हैं तो रुजावली भी अपनी विकराल मूर्ति लिये फिरती होगी ना, ना, आप इस विचार का स्वप्न में भी ध्यान न करें वहां, न तो विविधामयों की आशंका और न जरा से जर्जरित होने की चिन्ता है। मृत्यु लोक के प्राणियों के समान क्रूर काल स्वर्गीय व्यक्तियों को कवलित नहीं करता। चिता की ज्येष्ठा चिंता, और शोक का वहां ओक नहीं। हिम और आतप की पीड़ा से पीडित होने का वहां अवसर ही नहीं आता। मर्त्य वर्ग जिस उदरदरी के भरण में यहां सतत विचेष्टित रहता है, वहां इसकी आवश्यकता नहीं क्योंकि क्षुधा और तृषा को भी वहां क्षुधातृषा बाधित नहीं

करती। किसी भी प्रकार की ग्लानी और भय को वहां स्थिति नहीं। अधिक क्या कहूं वहां के गुणों की विस्तृत व्याख्या करना सरस्वती और चतुरानन की शक्ति से भी बाहर है। पर हां वहां पर मामूली से केवल ३ दोष हैं जोकि आप जैसे मेधावियों के ध्यान देने योग्य नहीं। मैं उनकी भी यथार्थ एवं विस्तृत व्याख्या किये देता हूं। एक तो यह कि वहां पर केवल शुभ कर्मों का फल ही भोगा जाता है। यदि कोई नवीन कर्म करना चाहे तो वहां वह नहीं कर सकता। दूसरे अपने से अधिक पुण्यात्माओं को स्वापेक्षया उत्कृष्ट भोग भोगते देख कर स्वर्गीय व्यक्तियों को जो डाह होती है-ईर्षाग्नि में जिस प्रकार वे भस्म हुआ करते हैं, उसका वर्णन करना भी मेरी क्षुद्र वाणी की वर्णन शक्ति से बाहर है। और हां तीसरा एक और दोष है वह यह कि आप जानते हैं कि भोगों से कोई तृप्त नहीं होता फिर दिवङ्गत प्राणियों को तृप्ति कहां? यही कारण है कि जब वे भोग भोगते हुए पुण्य का क्षय होने के कारण अधः पतन को प्राप्त होते हैं तब उन्हें जो दुःख होता है वह दुःख भी वर्णनातीत है। उसका यह हृदय द्रावक पतन उसको तो व्यथित करता ही है, पर और भी ऐसा कौन वज्र हृदय होगा जिसको उनकी मनोव्यथा व्यथित न करती हो। यह स्वर्ग के दोष हैं पर केवल स्वर्ग में ही नहीं, ब्रह्मलोक पर्यन्त इन दोषों का समावेश है। आप सत्य ही पूछने लगे तो भगवन्! इन दोषों को देखते हुए ही मनस्वी लोग ब्रह्मलोक तक की उपेक्षा किया करते हैं" देव दूत के इन शब्दों को सुन कर महर्षि ने विमान से मुंह मोड़ लिया। खरा जवाब देते हुए बोले "हे अनघ! मैं स्वर्ग जाना नहीं चाहता कृपा कर आप पधारिये और देवेन्द्रादि समस्त प्रतोक्षकों की सेवा में मेरी ओर से प्रणाम पूर्वक क्षमा याचना कीजिये:-

"नाहं स्वर्गं गमिष्यामि त्वं गच्छाशु यथासुखम्" (महाभारत)

उफ्!! जिस स्वर्ग के लिये जन समाज इतना लालायित एवं विचेष्टित है वह स्वर्ग भी दुःखाकर है। जिस के गिरातीत दुःख को सुन कर इस सहृदय मुनिने उसके ठोकर मारदी। आश्चर्य है! आश्चर्य क्या चित्रता की पराकाष्ठा है यारो!

बहुत शोर सुनते थे पहलू में दिलका।
जो चीरातो यक क़तर ये ख़ून निकला॥

—— —— (अपूर्ण)

गोपदेवी लीला

गतांक से आगे।

[ले० श्री भक्त मथुराप्रसाद जी]

ऐसे कठोर और क्रोध भरे वचन सुनकर श्री वृषभानु, नन्दिनी जी चुपचाप अचम्भे में रहजाती हैं और सरस्वती जी को सुमिरन करके कहती हैं:- हे गोपदेवी जिनके दर्शन की अभिलाषा ब्रह्मा विष्णु आदि देव करें हैं, तथा बड़े२ ऋषी मुनी अग्नि और जल में वर्षों बड़े कष्ट से जप और तप करत हैं और जिनके चरण कमल की रज को बड़ी अभिलाषा और मान से मस्तक पर चढ़ावत हैं सो श्री कृष्ण पूरन कला के अवतार दीन के कलेश को हरन वाले पृथ्वी को भार उतारिवे कूं प्रगट भये हैं वे परमात्मा पुरषोत्तम गोलोक

धाम (जो सबसे परे उत्तम धाम है) के वासी हैं श्री कृष्ण भगवान सबके चूड़ामणि हैं जिनके भक्तन की जेमहिमा है कि ब्रह्मा विष्णु और-साक्षात् आप उनके पांछे २ डोलत फिरत हैं वैसे तो उनको कोई वस्तु वांछि ही नांय सकती है परंतु केवल प्रेम के वशमें रहत हैं और याही कारण भगतनु के वश रहनो उनको स्वभाव है श्री नारद सूत्र में उन के मुखारविंद को वाक्य है।

नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदये न च ।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

(प्रकाशित) यशोदा मैया की ऊखल बन्धन लीला नरसी लीला नाम देव मीराबाई पित्रदास कर्मावाई आदि की कथायें उन के या भाव की साक्षी हैं और कारे रंग को तू कहा कहति है वा रंग की महिमा तो उनके परम भक्त सदा शिवजी ही जानत हैं जो कारी जटा कारो विष (नील कंठ) कारी भस्म-और कारे सर्प को नित्य ही अपनो भूषण बनाये रहत हैं-जन्म के समय बड़ी अभिलाषा से यशोदा जी के स्थानपर दर्शन कारन पहुंच कर अड़ही तो गये और बिना दर्शन पाये न हटे और रहस्य में बड़ी अभिलाषा से गोपी बन कर बड़ी उमंग से दर्शन करे जबसे ही तो श्री वृन्दावन में गोपेश्वर जीके नाम से स्थापित है। और बकासुर धेनुकासुर वत्सासुर शकटासुर तृणावृत पूतना अघासुर प्रलंबासुर कंसादि को वध करनो कालिया दमन करनो-दावानल को पान करनो मुक्ताबन उपजाय देनो गोवर्धन परवत को अंगुरी पर धारन करनो इन सब बातन को तूने का खेल समझो है का तेरे नेत्र खोलिबे को पूरन नांय है।-सखियां मिलकर गान करती है

पद नं० १२

हमने बचपन से सुने गुन उसी मन मोहन के।
वोही करता है सकल सिद्ध मनोरथ जन के॥
जिस ने वैकुंठ से आपाण बचाया गजका।
भक्त प्रहलाद की रक्षा को वह नरसिंह बना॥
व्याध मिलनी से अधम जिसने उबारे छिन में।
राज लंका का विभीषण को दिया दक्षिन में॥
ब्रज मंडल में उसीने करी महिमा रोशन।
सात दिन उंगली पै धारा है गिरि गोवरधन॥
बाल बछड़ों को चुरा के हुआ लज्जित ब्रह्मा।
देख महिमा वो श्री कृष्ण के चरणों में गिरा॥
जाके गुन गावै हैं शिव शेष मुनी नारद से।
धन्य है वोही हिये जाके वो मथुरेश बसे॥

श्री जी बचनः-हाय कैसे अपराध और अचरज की बात है कि तू उनकी निंदा करै है काल तईं तो तोकूं मैं बहुत समझदार जानति ही परंन्तु आज तो तू ने ऐसे बोल बोल के अपने को महा मूर्ख जनायो और मोसे तू कहा कहति है त्रिलोकी में ऐसो कोऊ नांय है जो मेरे प्रेम को क्षणमात्र हू डामाडोल करि सकै मोकूं तो ऐसी जानि परति है कि अबलों तोकूं प्रेम की शक्ति और महिमा काहू ने बताई ही नांय नांय तो कबहू न ऐसी कहती वा भक्ति की महिमा को वर्णन की सामर्थ्य लेखवा वाक्य में है ही हांय परंतु मैं अपनी बुद्धि के अनुकूल तोकूं किंचित बतावति हौं प्रेम संपटलीलामेंसे लियागया देख प्रेमरे कहिबोतो और है परंतु प्रेम कछु और ही बात है वामें तर्क वितर्क की आवश्यकता नांय है। चित्त जब इन बातन से रहित है के स्वाभाविक अवस्था में स्वाभाविक ढंग पर-अपने प्यारे के सुख को सर्वोपरि मानत हैं और वाही में

स्वयं सुखी रहत हैं। जैसे सिंह निर्भय रहत है और भोकने वारे कुत्तन से कछु नाय डरतु हैं ऐसे ही प्रेम रूपी सिंह धमकी और कष्टसे कछु भय नांय करतु है, और दीपक की जोति जैसे अंधियारा जितनी अधिक होय उतनी ही अधिक चमके है वैसे ही प्रेम जितो कष्ट वाके कारन उठावनो परै वैसे ही अपनो चमत्कार अधिक दिखावै है और जैसे चंद्रमा सिगरे संसार को अपने तेज से और जोति से शीतल करतु है ऐसे ही प्रेमी अपने प्रेम से सबको ठंडो और शांति करै है जबलों प्रेम को दीपक भीतर ही जरतो रहै है वाको बलपूर्ण रहै है और दोनों (पूज्य और पूजक) के हृदय को वृद्धि पूर्वक प्रफुल्लित राखै है जब मुंह के द्वारे बाहिर निकार्यो जाय है तब हलको परिजाय है परंतु प्रेमिन से छिपायो हू नांय जाय सकै है। और वह नेत्र होठ गाल आदि के द्वारे अपनो प्रकाश दिखावै है, आंसुन की धारा वे रोक टोक चलन लागै है, गरो रुकि जाय है और सिसकी बंधि जाय है आपे से बाहिर ह्वै जाय है, नारी तलक छूटि जाय है। प्रेम के उमंग में अपने प्यारे को दोष हू गुण दिखाई परै है और प्यारे को दियो कष्ट हू अपने को अमृत जैसो जानि परै है और प्यारे को किंचित् हू कष्ट सह्यो नांय जाय है, उत्तम ते उत्तम वस्तु काहू ते मिल जाय वह अपने प्यारे के हेत ही लगायवे कूं जी चाहै है वा वस्तु से जो अपने आप वर्ती जाय है एतो हर्ष कदापि हू प्राप्त नांय होय है जितो प्यारे के वर्तन से प्राप्त होय है। प्रेम एक जागती जोति है। वाकेद्वारे आप से आप अतुल आनंद प्राप्त होय है जा को जी चाहै बरति के देखि लेय याते-अधिक विश्वास वाकी शक्ति और सचाई में कहां ह्वै सकै है। या शरीर के त्याग करने पै हू ऐसे प्रेम को क्षय नांय होय है जैसे सरोवर में एक जड़ से निकसे भये नीले और पीरे द्वै कमल शोभायेत हैं वैसे ही एक आत्मा से हम दोनों के शरीर गुथेभये हैं और जैसे घनश्याम अर्थात् गहिरे बादरन में छिपे रहके बिजुरी चमकती है और जैसे दीपक की लौ में काजर रहै है परंतु दिखात नांय है वाही ढंग से श्री कृष्ण मोमें और मैं उनमें नित्यही मिली रही हौं औतार लेन न लेन से या सम्बन्ध में कोऊ भेद नांय परै है और न वाको आदि अंत है ऐसो ही रह्यो-और ऐसो ही रहैगो।

(अपूर्ण)

भजन

मन फूला फूला फिरे, जगत में कैसा नातारे ॥
माता कहै यह पुत्र हमारा बहिन कहै विर मेरा।
भाई कहै यह भुजा हमारी, नारि कहै नर मेरा ॥१॥
पेट पकर के माता रोवै, बांहि पकर के भाई।
लपट झपट के तिरिया रोवै हंस अकेला जाई ॥
जब लग जीवै माता रोवै, बहिन रोवै दस मासा।
तेरह दिनतक तिरिया रोवै, फेर करे घर वासा ॥
चार गजी चरगजा मंगाया, चढा काठ की घोड़ी
चारों कोने आग लगायी, फूंक दियो जस होरी ॥
हाड़ जरै जस लाकड़ी केस जरै जैसे घासा।
सोना ऐसी काया जर गई, कोई न आया पासा ॥
घर की तिरिया ढूंढन लागी, ढूंढ फिरी चहुं देसा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, छाड़ीजग की आसा॥

हमारा कर्तव्य

प्रिय पाठकगण ! फिर से गोअंक की चर्चा करते हुए हम सब को मिल कर प्रथम अपने एक वर्ष के कार्य पर विचार करलेना उचित है। वर्ष आरम्भ होने पर आशा थी और उत्साह व उमङ्ग थी कि आगामी वर्ष भक्ति के प्रकाशन में विशेष उद्योग करेंगे। अच्छे लेख प्रकाशित करेंगे, पृष्ठ संख्या बढ़ावेंगे और भक्ति के परिवार को बहुत बढ़ावेंगे। परन्तु भगवत् इच्छा बलवान् है हुआ वही जो मालिक को मंजूर था। हां फिर भी कर्म्म के अभिमानी होते हुए यह अनुभव करते हैं कि हमारे कर्तव्य कर्म्म में त्रुटि रही जिससे आशा सफलीभूत नहीं हुई परन्तु ज्यों २ सत्य के निकट पहुंचते जाते हैं यही अनुभव होता है कि भक्ति अपने विकाश और प्रकाश के लिए सेवा चाहती है। वह सेवा निष्काम पवित्र होनी चाहिए। भक्ति मायावी शक्तिके सहारे अपना विकाश करना पसन्द नहीं करती क्योंकि इसकी आवश्यकता नहीं है, वह पहले ही बहुत बढ़ी चढ़ी मात्रा में विद्यमान है। ज्यों २ हमारे हृदय में पवित्रता बढ़ती जावेगी त्यों २ भक्ति का परिवार भी बढ़ता जावेगा। पाठकगण ! आपको यह जान कर प्रसन्नता होगी कि हम आगे ही को बढ़ रहे हैं। उन भाई बहनों की संख्या जो भक्ति को प्रेम व लग्न से पढ़ते हैं बढ़ती जारही है और भक्ति बहुत दृढ़ता से आगे बढ रही है। इस वर्ष बाह्य वायु मण्डल भक्ति के अनुकूल न होते हुए भी भगवान् ने भक्ति को अपनी दया के हाथ से उन्नत किया है।

अपनी पिछली भूलों को ध्यान में रखते हुए आइए भविष्य में इस यज्ञ को पूर्ण करने के लिए नवीन उत्साह से आगे कदम बढ़ावें और भगवान से प्रार्थना करें कि हमको मनोवाञ्छित फल प्रदान करें।

गोअङ्क

भगवान की दया से हमारा यह वर्ष गोअंक से आरम्भ होता है। देश की सुख सम्पत्ति और शान्ति के लिये भक्ति से दूसरा कोई उपाय है तो निस्सन्देह गोरक्षा ही है। यह निर्विवाद सिद्ध है कि गो है तो धर्म्म है, जीवन है, सभ्यता है और सुख व शान्ति है अन्यथा कुछ भी नहीं। गो का क्या महत्व है उसकी रक्षा व उन्नति के क्या २ उपाय हैं और इस काम को किस भांति किया जावे इन सब प्रश्नों पर गोअंक में अच्छी विवेचना होगी। गोअंक से देश को बहुत लाभ पहुंचेगा और यह प्रयत्न भक्ति द्वारा फिर भी होता रहेगा। गोअंक ऐसी पत्रिका होगी जिसको घर में रखने से प्रत्येक आदमी को लाभ पहुंचेगा। प्रिय पाठकगण ! आप गोअंक की प्रतिक्षा करें और उसका वी० पी० लेने को तय्यार रहें। आपको यह पढ़कर कुछ खेद होगा कि प्रयत्न करने पर भी हम गोअंक विजय दशमी पर प्रकाशित नहीं कर सकेंगे, दीप मालिका निकट गोअंक प्रकाशित हो सकेगा। गोपरि-पालन की शिक्षा का अभाव और गोरक्षा से हमारी लापरवाही होने से गोअंक निकालने में हमको कुछ समय और लगेगा यह काम बहुत ही परिश्रम व व्यय का है परन्तु जो कुछ आपके हाथ में पहुंचेगा उससे आपको बहुत सन्तोष होगा। इसकी पृष्ठ संख्या १५० और रंगीन तथा सादा चित्र लगभग पचास तीस के होंगे, मूल्य १।) रुपया होगा। अन्यत्र गोअंक की विषय सूची छपी है उससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि गोअंक में क्या २ सामग्री होगी। आशा है आप इस उपहार से प्रसन्न होंगे।

भक्ति के गो अङ्क की विषय सूची।

(१) कविताएँ। (२) आर्यों की गो भक्ति के शास्त्रीय प्रमाण। (३) वैदिक साहित्य से गो भक्षी थे। (४) गोरक्षा के प्रश्न पर बौद्ध धर्म का प्रभाव। (५) कृषि प्रधान आर्यावर्त और गोरक्षा। (६) भारतवर्ष में पश्चिमीय शैली पर गोपरिपालन के उदाहरण (७) नस्ल की खराबी और उसके कारण। (८) सान्डों का अभाव। (९) प्रजा की जिम्मेवारी। (१०) गवर्नमेन्ट की नीति। (११) कानपुर की टैनरी। (१२) चमड़े का व्यापार। (१३) कृषि और गोरक्षा। (१४ कलियुग का चित्र दलोप और सिंह। (१५) मुसलमानी राज्य की ओर से गो हत्या का प्रश्न। (१६) बाबर से लेकर मुसलमानी शासन काल में गोवध का निषेध। (१७) फरमान आदि। (१८) हिन्दू मुसलमानों का समझौता इस प्रश्न पर सदियों पहिले हो चुका। (१९) कुरानशरीफ़ और गोरक्षा। (२०) पश्चिमीय राष्ट्र स्वभाव से गोमांस हारी हैं। बगैरह में गोहत्या के कसाई खाना खुलवाना (२१) गोहत्या का वर्तमानस्वरूप। (२२) हिन्दू मुस्लिम दंगे और गोरक्षा की दृष्टि से अंग्रेजी राज्य का संक्षिप्त इतिहास। (२३) गोशाला बनाम कसाई खाना। (२४) गोशालायें ही गोहत्या बन्द करने के केन्द्र बन सकते हैं। (२५) गौशालाओं का सुधार (२६ गो महासभा कलकत्ता का संक्षिप्त इतिहास। (२७) समय २ पर होने वाले गो महासभा के प्रस्ताव क्रमवार। (२८) वाइसराय को डिपुटेशन। [२९] उनका जवाब। [३०] गोरक्षा के प्रधान केन्द्र। [३१] मथुरा ही गोहत्या बन्द कराने का केन्द्र बन सकता है। [३२] तीर्थ स्थानों में केन्द्र बनाने की आवश्यकता। [३३] गो जाति की उपयोगिता। [३४] भारत की गोजाति की अवनति के कारण और उसकी उन्नति के उपाय। [३५] स्वाद की दृष्टि से गो की उपयोगिता। [३६] गोचर भूमि की आवश्यकता। [३७] भारत वर्ष के भिन्न २ गोवंश और उनके हालात। यदि होसके तो चित्र भी। [३८] गाय अधिक लाभदायक है या भैंस। [३९] वर्तमान अवस्था में पशुओं के मेले गोरक्षा में हानि कारक हैं या लाभदायक। (४०) गो के लिए चारे का प्रश्न कौन चारे अधिक उपयोगी व लाभदायक हैं। [४१] डेरी फार्म की सफलता के उपाय। (४२) दूध की उपयोगिता। ४३. दुधार गो बनाने की विधि। [४४] उत्तम गो की पहचान। [४५] साण्ड की उपयोगिता। [४६] गोपालन की शिक्षा का प्रश्न। [४७] आदर्श गोगृह। (४८) दूध की उपयोगिता दही, घी, पनीर, मक्खन मठा आदि के रूप में। (४९) दूधका व्यवसाय ५० चमड़े का व्यवसाय और गोरक्षा। ५१ ऐसा कानून जिससे भारत कि वर्तमान गोहत्या में कमी होसके। (५२) आर्थिक दृष्टि से भारत में गोरक्षा का प्रश्न। (५३) देशी रजवाड़े और गोहत्या।

कृपया चन्दा मनिआर्डर से भेजिये।

बारवां अंक आपकी सेवा में उपस्थित है। इसके बाद 'भक्ति' पांचवें वर्ष में पदार्पण करेगी। इसलिये पांचवें वर्ष का पहिला अंक आपकी सेवामें 'गोअंक' के नाम से पहुंचेगा। बारवें अंक के पहुंचने पर जिन ग्राहकों का वार्षिक चन्दा समाप्त होजाता है वह कृपया अगले वर्ष का चन्दा मनिआर्डर से भेजें। साथ ही ≈) 'गोअंक' की रजिस्ट्री के लिये भी भेजें जिससे अंक के खोये जाने का भय न हो। हमें 'गोअंक' पर काफी वी० पी० करनी होंगी इसलिये सम्भव है कि 'गोअंक जैसा उपयोगी साहित्य आपको देर से मिले। दूसरे मनिआर्डर भेजने से हमारा काम भी हल्का हो जावेगा। अतः ग्राहक अनुग्राहकों से सादर प्रार्थना है कि कृपया अपना वार्षिक चन्दा मनिआर्डर से भेजें।

भक्ति के संरचक

भक्त नन्दकिशोर जी चर्खी दादरी १११)
लेफ्टेनेन्ट सरदार रघुवीरसिंह जी सांधावालिया राजा सांसी अमृतसर १११)
पं जैनारायण जी भोड़ाकला, गुड़गावां १२०)
धर्म सीह मावजी जेठवा कोलरीप्रोप्राइटर झरिया १०१)
आनरेबिल सरदार जुगेन्द्रसिंह जी मनिस्टर आफ पेग्रीकल्चर लाहौर ,,
बाई बदामो देवी पुत्री लाला गनेशीलाल चर्खीदादरी ,,
राव बहादुर, कप्तान राव बलवीर सिंह जी ओ, बी, ई, रामपुरा ५१)
प्रो० बाबूलाल जी भार्गव एम. ए. दिल्ली ५१)
राव श्रीराम जी रईस नांगल २५)
महाशय शोभाराम जी डूंगरवास २५)
बाई लछमादेवी भगनी राव जगमालसिंहजी रईस नांगल ,,
श्रीमती रानी निहालकौर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलवीरसिंह जी ,,
सेठ बनवारी लाल जी लोहिया दिल्ली ,,
श्री भक्तावीदेवी धर्मपत्नी लाला नन्दकिशोर जी चर्खीदादरी ,,
श्रीमती गोदावरीदेवी भगनी लाला प्रभुदयाल जी ,, ,,
लाला कृष्णलाल जी जींद २५)
लाला भागीरथमल कटरा लच्छूसिंह देहली २१)

सहायक

पि. टी. शाह जयपुर	१२)
जमादार उमरावसिंह भाडावास	११)
राव साहब चौधरी हेतराम् जी दौलतपुर	११)
चौधरी हुकमसिंह जी निखरी	११)
लाला अमीचन्द नरसिंहदास भिवानी	११)
चौधरी गन्धर्वसिंह जी यादव पटीकड़ा	११)
लाला सरदारीलाल जी क्लाथ मार्केट दिल्ली	,,
माई गुलाबोदेवी दिल्ली	५)
लाला बनारसीदास दिल्ली	५)
महाशय शादीराम जी मस्तापुर, रेवाड़ी	५)
श्रीमती सूरज देवी धर्मपत्नी चौधरी जोरावरसिंह जी एडीशनल जज अलीगढ़ ।	५)
श्रीमान् पण्डित जयराम जी 'सनातन' देहली	५)
रा० ब० लेखनारायण सिंह जी बाढ़, पटना	५)
बा० बैजनाथसिंह यनंगयोंग, बर्मा	५)
ठाकुर भूरसिंह खण्डेला, जयपुर	,,
बड़िया बाबा, मन्दिर श्री दादी जी खेतड़ी	,,
सेठ मेलाराम जी अग्रवाल भिवानी	५)
जमादार दीपचनद जी	५)
लाला ओंकारमल जी कानपुर	५)
लाला हरिश्चन्द्र जी प्रेमहाउस, दिल्ली	,,
बाबू रामस्वरूप गनेश मील ,,	५)
लाला रामेश्वर जी गुप्ता ,,	,,
लाला प्रभुदयाल जी फरुखनगर	,,
त्रिवेणीदेवी धर्मपत्नी लाला रामकरणदास खरक	,,
लाला श्रीराम जी गुप्ता भटिण्डा	,,
बाबू जयदयाल भार्गव भोड़ाकलां	,,
रा०सा० ला० सेवकराम एम, एल, सी- लाहौर	,,
पं, नानकचन्द एम, एल. सी लाहौर	,,
श्रीमान् धानी चन्द लाहौर	
श्रीमती सरस्वती देवी आश्रम रेवाड़ी	
श्रीमती दुर्गीदेवी भिवानी	
डाक्टर कुन्तलकुमारी दिल्ली	
हवलदार ठाकरसिंह मूसपुर	
सूरजमल सुरोलिया खेतड़ी	
भूरसिंह माजरा, अलवर	
मोहकमसिंह बाघवाकी	
डा० इन्द्रसैनजी पुरी, रेवाड़ी	
श्री० कृष्णा पुत्र ला० प्रभूदयाल दादरी	
ठाकुर बाबुलाल कन्हैयालाल जी मथुरा	
श्री हासानन्द जी वर्मा मथुरा	

भक्ति के नियम

१. भगवान् की भक्ति का प्रचार करना, गो रक्षण और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना, वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना, सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना, राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. अग्रिम वार्षिक चन्दा सर्व साधारण से २) होगा

४. जो महानुभाव २५) रुपया देंगे वह पत्रके संरक्षक और ५) देने वाले सहायक होंगे

५. बाहर का कोई भी व्यापारिक विज्ञापन नहीं लिया जायगा।

६. लेखोंको प्रकाशित करना, न करना, घटाना, व बढ़ाना सर्वथा सम्पादक के अधिकार में होगा

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नामसे और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्ति के नाम से होना चाहिए

८. जिन ग्राहकों के पास जिस मास की "भक्ति" न पहुंचे, उनको स्थानीय पोस्ट आफिस में पूछ कर उस मास की अमावस्या से पूर्व कार्यालय में सूचना भेजनी चाहिये स्थानीय पोस्ट आफिस में बिना पड़ताल किये अथवा अमावस्या के बाद सूचना आने पर "भक्ति" नहीं भेजी जायगी

९. पत्रोत्तर के लिये जवाबी, कार्ड भेजना चाहिये।

विषय सूची

विषय	लेखक	पृष्ठ
१. वेदोपदेश		४५७
२. भगवद्भक्ति [	ले० पूज्य श्री० भोलेबाबाजी	४५८
३. भगवान् भक्ताधीन हैं [	ले० श्री हीरालाल जी अग्रवाल	४६६
४. न कोई पाता तेरा पार (कविता)	ले० पं० गंगा विष्णु जी	४७०
५. भक्त का भोजन [	ले० पं० कृष्ण शर्मा जी	४७१
६. पूर्तकर्म की पूर्णता [	ले० पं० किशोरीदासजी वाजपेयी	४७२
७. मोहन (कविता) [	ले० श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी	४७७
८. सब प्रकार की सम्पत्तियों का मूलाधार [	ले० श्री गंगा प्रसाद जी अग्निहोत्री	४७७
९. काम से राम अत्यन्त दूर है [	ले० श्री स्वामी आत्मानन्दजी	४७९
१०. भगवत् स्तुति (कविता) [	ले० स्वामी चिदात्मानन्द जी	४८२
११. पतित पावन राम (कविता) [	ले० श्री गोकिन्दराम जी अग्रवाल।	४८४
१२. सुखमय जीवन	ले० श्री० पं० सनत्कुमार विमल	४५३
१३. गोपदेवी लीला [	ले० श्री मथुरा प्रसाद जी	४८६
१४. भजन		४८८

REGD. No. L. 2077

भक्ति प्रेस में मिलने वाली पुस्तकें।

१.	भगवत्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहिता	मूल्य	॥=)
२.	भगवत् गीता दशम अध्याय पर्यन्त ...	"	।=)
३.	वदोपनिषत्	"	।=)
४.	अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला	"	=)।
५.	ज्ञानधर्मोपदेश	"	=)॥।
६	ज्ञान भक्ति योग संग्रह	"	=)॥
७.	सत्य शब्द संग्रह (गुटका)	"	।)
८.	सत्य शब्द संग्रह	"	।=)
९.	शब्दसंग्रह	"	=)॥
१०.	सारसंग्रह	"	=)
११.	भाषा फक्किका प्रकाश	"	॥)
१२.	भगवद्भक्तांक	"	॥=)
१३.	भगवदंक	"	॥।)

नोटः-एक रुपये से कम मूल्य की पुस्तक मंगाने वालोंको डाक महसूल सहित टिकट भेजने चाहियें।

मिलने का पताः-

श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।